(1) प्रस्तावित योजना का कार्यक्षेत्र राज्य –

प्रस्तावित योजना का कार्यक्षेत्र सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड है जिसमें उत्तर प्रदेश के 07 जिले तथा मध्यप्रदेश के 14 जिलों का भू–भाग शामिल है।

बुन्देलखण्ड अंचल में मध्यप्रदेश राज्य एवं उत्तरप्रदेश राज्य सम्मिलित हैं।

(2) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा का नाम (क्षेत्रीय, स्थानीय, हिन्दी एवं अंग्रेजी में) –

बुन्देलखण्ड का त्यौहारी नृत्य ''सैरा नृत्य'' का कलारूप गायन, वादन को चिन्हित किया गया है।

क्षेत्रीय नाम	हिन्दी नाम	अंग्रेजी नाम
सैरो	सैरा	Saira

(3) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा स संबंधित समुदाय का भाषिक क्षेत्र और भाषा, उपभाषा तथा बोली का विवरण –

योजना की सांस्कृतिक परम्परा समूचे बुन्देलखण्ड के जनमानस से संबद्ध है। इस क्षेत्र में बुन्देली बोली प्रयुक्त होती है। उक्त परम्परा के गीत एवं ब्यौरे में बुन्देली बोली प्रयुक्त होती है।

(अ) बुन्देलखण्ड की भौगोलिक पृष्ठभूमि

(ब) बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

(स) बुन्देलखण्ड का नामकरण

(द) भाषाई पृष्ठभूमि

(अ) बुन्देलखण्ड की भौगोलिक पृष्ठभूमि :–

इतिहास वेत्ताओं के बुन्देलखण्ड को भारतवर्ष का हृदय कहा है तो भूगोल शास्त्रियों ने विन्ध्याचल को हिमालय से भी पुरातन बताया है। विन्ध्यांचल की तलही में एक विशाल बीहड़ वन है, जो विन्ध्य श्रेणियों से

घिरा है, जहां उच्च तुंग श्रृंगों से सहसत्रों झरने और प्रपात प्रवाहित होते रहते हैं। इस स्थान को विन्ध्यक्षेत्र कहते हैं।

यह प्रदेश नर्मदा सोन खड्ड के उत्तर में गंगा घाटी की ओर मुंह किये स्थित है। यह वास्तव में भारत के प्रसिद्ध पठार का उत्तरी मध्यवर्ती भाग है। इस प्रदेश में मध्यप्रदेश के दतिया, टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना, भिण्ड की लहार तहसील एवं ग्वालियर की भाण्डेर तहसील और उत्तर प्रदेश के ललितपुर, झांसी, हमीरपुर, जालौन, बांदा जिले सम्मिलित हैं।

सामान्य तौर पर विन्ध्य परिक्षेत्र ही बुन्देलखण्ड है परन्तु इसका सीमांकन समय–समय पर प्रशासनिक आधारों पर भी गढ़ा गया। ओरछेश महाराजा वीरसिंह देव प्रथम के समय बुन्देलखण्ड में वर्तमान बुन्देलखण्ड तथा कुछ भू–भाग पश्चिमी बघेलखण्ड का भी शामिल था। जबकि डंगई क्षेत्र (पन्ना) के राजा छत्रसाल के समय ''इत यमुना, उत नर्मदा, इत चंबल, उत टौंस, बुन्देलखण्ड की सीमा मानी जानी लगी थी। भौगोलिक रूप से विन्ध्य परिक्षेत्र विंध्येला (विंध्यइला) कहलाता था जो एक प्रथक इकाई के कारण विन्ध्येला अपभ्रंश में बुन्देला और विन्ध्येलखण्ड – बुन्देलखण्ड हो गया।

पारंपरिक और ऐतिहासिक तौर पर बुन्देलखण्ड मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश के बीच विस्तारित एक बडे भू भाग को माना जाता है, पर वर्तमान में बुन्देलखण्ड को दोनों राज्यों के ग्यारह जिलों की भौगोलिक सीमाआं में वस्थित माना जा रहा हैं। इसमें मध्यप्रदेश का समूचा सागर संभाग जिसमें सागर, दमोह, पन्ना, छतरपुर और टीकमगढ जिले आते है। जब कि उत्तरप्रदेश के झॅासी, हमीरपुर, महोबा, बांदा, ललितपुर और जालौन जिले इस राज्य में शामिल है। इस तरह यह क्षेत्र मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में बटा हैं।

ऐतिहासिक आधार पर इस क्षेत्र की सीमाएं बनाई जाए तो इस राज्य के महापुरूष महाराज छत्रसाल को लेकर उस कथन को महत्वपूर्ण माना जा सकता है जिसमें कहा गया है कि –

''इत जमना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टोंस।
छत्रसाल सो लरन की, रही न काहू होंस।।

इस दोहे के अनुसार बुन्देलखण्ड की उत्तर की सीमा जमुना नदी है। दक्षिण सीमा नर्मदा नदी है, पूरब की सीमा टोंस नदी है और पश्चिम की सीमा चम्बल नदी है। ये इसकी ऐतिहासिक सीमाएं हैं। कुल मिलाकर महाराज छत्रसाल ने बुन्देलखण्ड में अपने इस राज्य को चारों प्रमुख नदियों के मध्य माना है अर्थात चारों नदियों को छूने वाला राज्य ही बुन्देलखण्ड है।

बुन्देलखण्ड पर महत्वपूर्ण कार्य करने वाले अंग्रेज अफसर जार्ज ए ग्रियर्सन ने लिखा है कि बुन्देली भाषा का क्षेत्र बुन्देलखण्ड के राजनीतिक क्षेत्र से मिलता जुलता नहीं है। क्योंकि किसी देश की सीमा का निर्धारण प्रशासनिक आधार पर नहीं, बल्कि भाषा, बोली, सामाजिक, सांस्कृतिक, आचार विचार, संस्कार भोजन और लोक संस्कृति के आधार पर किया जाना चाहिए। इस प्रदेश की भाषा बुन्देली है जो यमुना, नर्मदा के मध्य की सिन्ध पहूज, बेतवा, जामुनी, धसान, सोनार आर केन के कछारी भू–भाग के ग्रामीण अंचलों में बोली जाती हैं जिसके केन्द्रीय स्थल, झॉसी, टीकमगढ और सागर है। यहां बुन्देली का परिनिष्ठित स्वरूप उपलब्ध होता है।

इस प्रकार सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषा बोली के ठोस आधारों पर निर्मित मौलिक इकाई 23.00 से 26.00 उत्तरी अक्षांश एवं 77.5 से 79.5 पूर्वी देशांतर के मध्य कुछ लंबाकार भू भाग ही सही बुन्देलखण्ड है।

प्राकृतिक परिस्थितियॉ :–

भौतिक रूप – भारतीय पठार का अंग होने के कारण इसकी संरचना संबंधी विशेषताऍ वहीं हैं जो राजस्थान उच्च भूमि की है और यहां पर्व कैम्ब्रियन

महाकल्प में बनी प्राचीन नाइस एवं ग्रेनाइट शैलें पाई जाती हैं जिनके अवशेष प्रायः ऊंचे कठोर टीलों के रूप में मिलते है। यह पठारी प्रदेश बहुत नहीं है। सागर तल से इसकी औसत ऊँचाई 300 से 600 मीटर तक है।

यहां की भूमि पठारी, पथरीली और ककरीली ह जिसे रॉकड़ कहा जाता है। उत्तरी एवं दक्षिणी बुन्देलखण्ड की कुछ भूमि काली किस्म की मोटी है जबकि मध्यभाग की भूमि ऊँची नीची है। उत्तरी दक्षिणी पट्टियों की भूमि समतल एवं उपजाऊ है। मध्य बुन्देलखण्ड की टौरियाऊ भूमि में यत्र–तत्र मोटी, पतरूआ, कॉकर, काबर, मार, पड़आ, छापर और छिनकी जैसी विभिन्न प्रकार की भूमि प्राप्त है। जो जल के बहाव और ठहराव कर्म के आधार पर निर्मित होती रहती है। यहॉ की नीची और समतल भूमि कृषि कर्म एवं ऊँचीं भूमि आवास के उपयोग में लाई जाती है। दो पहाडियों के मध्य नीची भूमि में पत्थरों से सरलतापूर्वक तालाब और बंधियॉ बना लेना यहॉ की विशेषता है। पहाडियॉ सुरक्षित और सुरम्य दुर्गो के निर्माण में भी उपयोगी रही हैं। इसी कारण बुन्देलखण्ड में दुर्गो, गढियों एवं सरोवरों की अधिकता पाई जाती है।

दक्षिणी पठारी भाग विच्छिन्न है। मध्य का ग्रेनाइट पठार 300 मीटर ऊँचा है। नदी घाटियों में चौरस मैदान है। उत्तर की ओर एक तिहाई भाग चौरस है। इस पठारी भाग में कुछ नीची पहाडी श्रेणियॉ स्थित हैं। इसमें तीन विशेष प्रसिद्ध है – उत्तरी पूरवी सिरे पर कैमूर की पहाडियॉ, रीवा से मिर्जापुर जिले तक फैली है जो काफी नीची हैं। दूसरी श्रेणी इस प्रदेश के मध्यभाग में दक्षिण–पश्चिम से उत्तर पूरब की ओर फैली है और मानरेर श्रेणी के नाम से संबोधित होती है। तीसरी श्रेणी विन्ध्यांचल पर्वत की है जो प्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी भाग में स्थित है।

इस पठार का दक्षिणी सिरा एकदम ऊंचा उठा हुआ है अतः इसका जल अपवाद उत्तर की ओर है और गंगा के मैदान के पास पहुंचकर पठारी भूमि एकदम समाप्त हो जाती है। अतः गंगा नदी की ओर बहने वाली नदियॉ

इस पठार से उतरते समय अनेक जल प्रताप बनाती है। इस प्रदेश से उतरते समय अनेक जलप्रपात बनाती है। इस प्रदेश की मुख्य नदियॉ बेतवा, केन व धसान है। जो उत्तर की ओर बहकर गंगा एवं यमुना नदियों में मिल जाती है। बेतवा इस प्रदेश की पश्चिमी सीमा पर बहती है। टोंस नदी इस पठार को बुन्देलखण्ड एवं बघेलखण्ड दो भागों में विभक्त करती है। मैदान की ओर मिट्टी बढिया एवं उपजाऊ है। पठारी भाग में हल्की बालू युक्त कम उपजाऊ मिट्टी मिलती है।

जलवायु :– इस प्रदेश की जलवायु आर्द्र है, फिर भी समुद्र से होने के कारण यहॉ की जलवायु महाद्विपीय है। कर्क रेखा इस प्रदेश के मध्य से लकर गुजरती है, अतः गर्मियों में तापमान काफी ऊँचा हो जाता है जो 30 से.ग्रे. औसत रूप से रहता है। सर्दियों में काफी ठण्ड पडती है और तापमान का औसत 18 से.ग्रे. तक गिर जाता है। वार्षिक ताप– परिसर 16 स.ग्रे. तक पाया जाता है।

गर्मियों में मानसून हवाएँ इस प्रदेश पर अपना स्पष्ट प्रभाव डालती है बंगाल की खाडी से आने वाली मानसून इस प्रदेश के पूर्वी भाग में वर्षा करती है और सोन नदी के घाटी के निकट 125 से.मी. तक वर्षा होती है। पश्चिम की ओर वर्षा कम होती जाती है। बुन्देलखण्ड में 75 से.मी. तक वर्षा होती है।

सरिताएँ :– यहॉ की प्रमुख नदियों में बेतवा, धसान, चम्बल, सिन्ध, पुष्पावती, केन, जामनेर, नर्मदा, आदि नदियॉ वन प्रदेश की रक्षा करती आ रही है।

इनके अतिरिक्त जमुना, पहूज, बीला, बाधिन, सोनार, बेरमा, हिरन, जामुनी, जमडार, सजनाम, उर्मिल नदियॅा सभी उत्तर की ओर बहती है। केवल नर्मदा कछार का ढ़ाल उत्तर से दक्षिण को है। यहॅा की नदियां पठारी होने के कारण तेजप्रवाही हैं। अधिकांशतः राज्यों, जिलों एवं गांवों की सीमाएं नदियों और नालों से प्राकृतिक बनी हुई है।

कृषि :— बुन्देलखण्ड की 83000 वर्ग मील क्षेत्र की जमीन खेती के लिए उपयोगी मिट्टी वाली है पर वर्तमान में इसका केवल 1/3 भाग खेती में है। 1/3 भाग में जंगल है और शेष हिस्सों में खेती करने से हमारी खेती आसानी से वर्तमान से दूनी हो सकती है संपूर्ण बुन्देलखण्ड में औसतन वर्षा अच्छी होती है। जमीन सिंचाई युक्त होने पर एक फसल की बजाय तीन फसल हो जाती है।

वर्षा ऋतु में बाई जाने वाली फसल स्यारी या कतकी कहीं जाती है, जिसमें ज्वार, धान, उर्द, मूंग, कोदो, समॉ, लठारा, कुटकी, और तिली बोई जाती है। ये मोटे अनाज कहे जाते है तथा सैंकड़ों वर्षो तक बिना धुने सुरक्षित रखे रहते है। दूसरी फसल उन्हारी या वैत की कही जाती है, यह कार्तिक, अगहन, में बोई एवं चैत में काटी जाती है। इसमें गेहूॅं, चना, जौ, मसूर, तेवडा, अलसी, सरसों और सेउऑ पैदा किया जाता है। इस फसल को जाड़ा एवं पानी अधिक चाहिए। तीसरी फसल गर्मी में बोई जाती है। मूॅंग, उर्द, कलोंदा, कुम्हडा, चीमरी, और जिठऊ साठिया धान पैदा की जाती है। यह फसल विशेषकर तालाबों और नदियों में की जाती है। कपास की खेती जालौन, बॉंदा, हमीरपुर, क्षेत्रों में की जाती थी।

खनिज संपदा :— बुन्देल भूमि खनिजों से भरपूर है। यहॅा लोहा, अभ्रक, सीसा, चॅादी, हीरा और चूना, जैसी बहुमूल्य सम्पदा प्राप्त है। हीरा छतरपुर, पन्ना और अजयगढ़ क्षेत्रों में, लोहा एवं सीसा टीकमगढ़, नरबर, छतरपुर, झॅासी, बिजावर में चूना, कटनी, दमोह, सागर, पन्ना, जबलपुर, दतिया में चॉदी टीकमगढ के तमोरा, सूरजपुर, हटा, नारायणपुर में, अभ्रक टीकमगढ, सागर गौरा, पत्थर पन्ना, टीकमगढ में, निसाव (चीप) पत्थर ललितपुर, सागर, पन्ना, नमक, चिरगांव के पास उपारी में प्राप्त होता है। वर्षा ऋतु में पहाडियों एवं टौरियों की तलहटी के नीचे क्षेत्रों में पानी के ऊपर चिकना द्रव पदार्थ दिखता है जो पेट्रोलियम जैसे चिकने तेल पदार्थो के होने के स्पष्ट संकेत है।

आवागमन और यातायात :– बुन्देलखण्ड पहाड़ी और जंगली भू–भाग होने से आवागमन के साधनों में पिछडा रहा है। टेढ़े–मेढ़े गहरे नाले, नदियों, नीचे ऊँचे घाट और दर्रे यातायात में बाधक रहे है। नदियों पर पुल न होने से आवागमन एवं यातायात के साधन बलगाडी, घोडा, गधे, भैंस, भैंसा और लद्दू बैल (भर्रे) ही थे। बोझा ढोने वाले ''बुझिया'' भी सामान ले जाने का काम करते थे। अंग्रेजी शासन के प्रभाव से सड़क मार्गो में कुछ सुधार हुआ था।

परिवहन के साधनों का इस प्रदेश में विकास नहीं हुआ है। बम्बई झॉसी रेलमार्ग इस प्रदेश के मध्य से गुजरता है। इसके अतिरिक्त मानिकपुर झॉसी कटनी बीना रेलमार्ग मुख्य है। 5 हजार कि.मी. लम्बी सड़कें है जिसमें 60 प्रतिशत का प्रयोग साल भर होता है।

बुन्देलखण्ड के वन–उपवन :– बुन्देलखण्ड का अधिकांश भाग, विशेषकर मध्य की पठारी भ्मि वनाच्छादित है। यहॅा के जंगल वन संपदा से भरपूर है। इमारती एवं जलाऊ लकड़ी के अतिरिक्त औद्योगिक लकड़ी भी यहॅा उपलब्ध है। सागौन, सेजा, कुरौ, धवा, करधई आदि के अतिरिक्त बांस, सलैया, गुंजा, छेवला, कर्रा, हर्रा, बहेड़ा ऑवला भी बहुतायत में प्राप्त है। खैर के जंगल भी खूब हैं। आम, जामुन, खिरनी, अचार, तेंदू, बेर, महुआ, मकोर जैसे फलदार वृक्ष यहॉ के वनों में भारी संख्या में हैं। औषधियों वाली जडी–बूटी और घास भी प्राप्त होती है। वन वृक्ष बुन्देलखण्डवासियों के जीवन साथी है। फलों को खाकर कितने अधिक लोग जीवन गुजार देते है कि गणना भी कठिन है। अकाल के समय तो यहॅा के लोग वनोपज से अपने प्राणों की रखा करते है। इसलिए यहॉ कहावत है कि –

''मेघ करौंटा लैगओ, इंद्र बॅाध गओ टेक।
बैर मकौरा यौ कहै, मरन न पावे एक।''

वनफल खाकर भी लोग अपना अकाल का समय काट लेते हैं और प्रसन्न रहते हैं।

इस प्रदेश में बिखों (छोटे पौधों) में तुलसी, बोबई, सरफौंका, दौना–मरूआ, करौदी, सहदेवी, बला, महाबला, किरकिचयाऊ, बांसा आदि और लतिकाओं में कृष्णकान्ता, राधा कान्ता, गुरबेल, नागबेल ओंधपुष्पी आदि तथा जड़ी–बूटियों में गुरमार, लक्ष्मणा, भटा, कटारी, मदन मस्त, रतनजोत, अमरबेल, भूषाकर्णो, भौफली, शंखपुष्पी आदि की बहुतायत है और ये प्रसिद्ध भी है।

यहाँ की प्राकृतिक वनस्पति मानसूनी पतझड प्रकार की है। जिसमें सागौन, साल, बाँस, महुआ, ढाक, शीशम तथा बबूल वृक्ष मुख्य है। कम वर्षा एवं अनुपजाऊ मिट्टी वाले ऊबड़–खाबड भाग पर छोटी कॉटेदार झाडियाँ उगती है। निचले पठारों एवं कम वर्षा वाले भागों में घास के मैदान मिलते है। वनों में कुछ विशिष्ट घासें कॉस एवं कालिंजर उगती है। जिनका उपयोग कागज उद्योग में किया जाता है। सोन की घाटी में साल के जंगल है तथा विन्ध्यांचल की पहाड़ियाँ जंगलों से ढकी है। भारत में सबसे बढ़िया सागौन यहां मिलता है। यहॅा के वनों से इमारती लकड़ी, गोंद, लाख, तथा ईधन की लकड़ी विशेष रूप से प्राप्त होती है। इस प्रदेश की 7.2 प्रतिशत भूमि वनाच्छादित है।

(ब) बुन्देलखण्ड का प्राचीन भौगोलिक परिवेश :–

यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि भौगोलिक परिप्रेक्ष्य के अभाव में इतिहास स्वयं में महत्वहीन है। किसी भी देश या क्षेत्र की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि काफी हद तक उसके भौगोलिक परिवेश से नियंत्रित एवं निर्मित होती है। इसीलिए अनिवार्यतः यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि किसी भी क्षेत्र विशेष का इतिहास उसके भौगोलिक कारणों पर निर्भर होता है क्योंकि वे ही कारक उसे पुष्ठ स्वरूप प्रदान करते है। बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक समृद्धि, कला वैभव, प्रागैतिहासिक, औद्योतिहासिक एवं ऐतिहासिक पुरावशेष राजनीतिक शौर्यगाथा तथा समाजार्थिक एवं धार्मिक परम्पराएँ मूलतः उसके विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के प्रतिफल है। क्योंकि यह भू–भाग उत्तरी एवं दक्षिणी भारत के मध्य अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति, चतुर्थिक पार्वव्य प्रदेश प्राकृतिक संसाधनों आदि क कारण विभिन्न कालों में शासकों एवं ऋषियों को अपने विशिष्ट अधिवास के लिए आमंत्रित एवं आकर्षित करता रहा है। इतना ही नहीं बल्कि उत्तर एवं दक्षिण के मध्य प्रवेश द्वार के रूप में सिद्ध होकर इस भूखण्ड ने शासकों, व्यापारियों, सार्थवाहों एवं धार्मिक प्रेणाताओं को उनके प्रथम प्रयास में ही सम्मलता अर्जित कराई। इसकी अद्‌भुत एवं आकस्मिक प्राकृतिक घटनाओं ने यहॅा के निवासियों को अत्यंत सुद्रढ एवं स्वावलम्बी होने के साथ साथ ईश्वरीय सत्ता के प्रति नत बनाया। यह पार्वव्य प्रदेश अपनी आकर्षक उच्चावच, भू–संरचना न्यूनाधिक निम्न मृदा, कठोर जलवायु आदि के कारण अपनी पृथक पहचान बनाए हुये है।

(स) बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :–

भारत वर्ष के मध्य भाग में अवस्थित नर्मदा के उत्तर और यमुना के दक्षिण विन्ध्यांचल की पर्वतमालाओं से समाविष्ट और यमुना की सहायक नदियों के जल से प्लावित, प्राकृतिक सौंदर्य से समन्वित जो भू–भाग है, उसे हम बुन्देलखण्ड कहते हैं।

बुन्देलखण्ड की भूमि अत्यंत समृद्धशाली है, इसका इतिहास भी गरिमामय और शौर्य से परिपूर्ण है। भारत के स्वतंत्र होने के पूर्व यह अनेकानेक छोटे बड़े राज्यों तथा जागीरों में विभक्त था। पराधीनता के उस युग में यहॅा राजनीतिक उथल पुथल होती रहीं, साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में विकास कार्य भी संचालित होते रहे। राजतंत्र अपने ढंग पर अपने–अपने राज्यों का संचालन करता रहा –

वैदिक युग – ऋगवैदिक काल में ऋग्वेद के अनुसार आर्यो का निवास सप्त सिन्ध् तक रहा। अतः बुन्देलखण्ड उनके प्रभाव से बाहर रहा। स्पष्टतः यहॉ पुलिन्दों, निषादों, शबरों, दॉगियों आदि आर्योत्तर जातियों का निवास था। पुलिन्दों का म्लेच्छ कहा गया है क्यों वे आर्यो की यज्ञमूलक संस्कृति को नहीं मानते थे। निषादों और शबरों ने बाद में आर्य संस्कृति स्वीकार की थी। उत्तर वैदिक युग में आर्यो ने हिमालय और विन्ध्यांचल के बीलच का क्षेत्र अपने अधिकार में कर लिया था। निश्चित है कि एक सांस्कृतिक संघर्ष वर्षो तक चला जिसका अनुमान बाल्मीकि रामायण के राम के अभियान से लगाया जा सकता है। एक तरफ दक्षिण को रक्ष–संस्कृति थी दूसरी ओर आर्य संस्कृति और तीसरी तत्कालीन क्षेत्रीय संस्कृति। क्षेत्रीय निषादों, शबरों, कोल, भील आदि ने तो राम का साथ दिया था, क्योंकि राक्षस उन्हें सताते थे लेकिन आर्य और वन्य संस्कृति के समन्वय में अधिक समय लगा था। सूत्र युग में आर्यो ने कठोर नियम, उपनियम बनाकर लोक जीवन में परिष्कार करने का प्रयत्न किया था पर उससे जटिलता और कर्मकाण्डी विधि–विधान की कट्टरता भी आई थी जो लोक सहज न थी। बुन्देलखण्ड में उसका प्रभाव बहुत बाद में पड़ा। इसी कारण यहॅा की वन्य संस्कृति महाभारत काल तक बनी रही।

रामायणकाल –

इतिहासकारों का मत है कि आर्यो ने विन्ध्य क्षेत्र पर सेना के द्वारा अधिकार नहीं किया वरन ब्राह्मण और क्षत्रियों के छोटे दलों ने प्रवेश कर

जंगलों को साफ कर अपनी कुटी तथा निवास बनाकर बस्तियॉ बसायी परन्तु वास्तविकता यह है कि अगस्त, अजि आदि ऋषियों ने विन्ध्य की प्रकृति की गोद में आश्रमों की स्थापना की थी जिससे इस जनपद में आश्रमी संस्कृति का प्रादुर्भाव हुआ था।

वैदिककाल में बुन्देलखण्ड आदिम जन जातियों का स्थल था लेकिन रामायण काल में ब्राह्मण अगस्त मुनि बनो से आच्छादित इस भूखण्ड में आये थे, जिन्हांने कालिंजर स्थल को अपनी तपोभूमि बनाई थी, तदनन्तर बुन्देलखण्ड भूमि तपस्या और ईश्वर आराधना के स्थल के रूप में विख्यात हो गयी। बाल्मीकि रामायण में नर्मदा नदी का नाम नहीं आया है। इससे स्पष्ट है कि उस काल तक आर्यो की बस्तियां नर्मदा तक नहीं पहुंची थी परन्त, अत्रि, सुतीक्षण और शरभंग ऋषियों के आश्रम यमुना के किनारे दक्षिण ही में थे। जिनमें श्रीराम चंद्र जी बनवास की अवधि में गये थे। अत्रि का आश्रम तो चित्रकूट (बुन्देलखण्ड) में प्रसिद्ध ही है।

कालान्तर में बुन्देलखण्ड का यह भू–भाग रामचन्द्र के भाई शत्रुधन के पुत्र शत्रु घाती के अधिपत्य में हो गया था। जिसकी राजधानी केन नदी के किनारे कुशावती बनायी गयी थी।

महाभारत काल :–

महाभारत काल में बुन्देलखण्ड के पूर्वी भाग में बेदि राज्य था। आधुनिक दमोह जिला और उसके उत्तर में रजबाडों का प्रांत (दर्शाण नदी के पश्चिम का भाग) चेदि देश में ही था। जो पश्चिम में बेतना और उत्तर में यमुना नदी तक था। वेदि देश में महाभारत के समय शिशुपाल का राज्य था। इसकी राजधानी चॅदेरी थी, यह स्थान आज भी प्रसिद्ध है। दशपर्ण देश में सागर जिला और बुन्देलखण्ड का कुछ भाग था और इसकी राजधानी विदिशा थी। इसमें हिरण्य वमी राजा राज्य करता था। जिसकी पुत्री पांचाल नरेश द्रुपद के पुत्र शिखंडी को व्याही गयी थी। लेकिन यह पुरूषत्व हीन था इस

कारण हिरण्य वर्मा और राजा द्रुपद में युद्ध भी हुआ था लेकिन तत्पश्चात दोनों में सन्धि हो गई थी। इसके बाद दर्शाण देश में सुधमी का नाम प्राप्त होता है। जिसका युद्ध पांडवों के सेनापति भीमसेन से हुआ था, जिसमें भीमसेन को विजय प्राप्त हुई थी।

महाभारत काल में बुन्देलखण्ड के उत्तरी पूर्वी भाग में कारूष राज्य था, जिसकी राजधानी कारूषपुरी (कर्वी) थी। अवध के राजा करम ने कलिंजर दुर्ग का निर्माण कराकर चेदि देश की राजधानी चंदेरी पर अपना अधिकार कर बूढी चंदेरी से कुछ दूर नयी चंदेरी की स्थापना की थी।

मौर्य काल – (322 ई.पू. से 184 ई.पू.) :–

मौर्यकाल (322 ई.पू. से 184 ई.पू.) के पूर्व ब्राह्मण धर्म के विरोध में दो नए संप्रदाय जैनधर्म एवं बौद्धधर्म उद्भूत हुए थे, जिससे राष्ट्रीय एकता विखंडित हुई और 16 महाजनपदों में राष्ट्र विभक्त हो गया था। उनमें से एक कन्नौज के पांचालों का था, जो बुन्देलभूमि में सिंध नदी से केन नदी तक था। मौर्य सम्राट अशोक की ससुराल इसी भूमि (विदिशा) में थी। अशोक के प्रभाव के कारण बुन्देलखण्ड में भी बौद्धधर्म का प्रचार हुआ था, जिसके उदाहरण गुजर्रा ग्राम (दतिया) एवं रूपनाथ (जबलपुर) के बौद्ध शिलालेख हैं।

मगध राज्य के शासक चंद्रगुप्त ने अपने राज्य के आसपास के कई जनपदों को अपने अधिकार में कर लिया जिससे अन्य जनपदों के राजाओं को भी चंद्रगुप्त के राज्य में मिल जाना पड़ा। चंद्रगुप्त मौर्य के साम्राज्य में नर्मदा के उत्तर का संपूर्ण भाग आ गया था। इस कारण बुन्देलखण्ड का परिक्षेत्र भी चंद्रगुप्त के साम्राज्य में था।

अशोक बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद उसने सांची और भरहुत में स्तूप बनवाए तथा जबलपुर के रूप नाथ एवं दतिया के गुर्जरा ग्राम में बौद्ध

शिलालेख उत्तीर्ण करवाए। किन्तु मौर्य साम्राज्य के पतन पर त्रिपुरी, एरण, विदिशा चेदि जनपद फिर स्वतंत्र हो गये।

गुप्तकाल (290ई.–400ई.) :–

बुन्देलखण्ड का दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र तो गुप्त राजाओं के प्रत्यक्ष शासन में था जिसका मुख्यालय एरण में स्थित था और उस शेष बुन्देलखण्ड उनके रिश्तेदारों नागों और वाकाटकों के अधीन था।

समुद्रगुप्त ने पद्मावती के राजा गणपति नाग को अपने अधिकार में करके अपना माण्डलिक नियुक्त कर दिया था। झांसी और ग्वालियर के मध्य आभीर लोग निवास करते थे इन्हें भी समुद्र गुप्त ने अपने अधिकार में कर लिया था इस भाग को अहीरबाड़ा कहते है।

स्कन्द गुप्त की मृत्यु के 4 वर्ष पश्चात् जब तोरमाण एरन आया उस समय एरन प्रांत स्कंद गुप्त के भाई बंध बुध गुप्त के अधीन था लेकिन बुध गुप्त की ओर से यहॉ सुरश्मि चन्द्र नामक माण्डलिक यमुना और नर्मदा के मध्य प्राप्त का प्रशासक था और सुरश्मि चंद्र की ओर ऐरन का राज्य संचालन करने के लिए ब्राहम्ण मातृ विष्णु और धान्य विष्णु नियत थे। इन्हीं के समय तोरमाण ने संवत् 542 विं. में अपना आधिपत्य बुन्देलखण्ड पर जमाया। एरन के बाराह बक्षस्थल में इसका उल्लेख हुआ है। ऐरन में मातृ में मातृ विष्णु द्वारा बनवाए स्तम्भ से ज्ञात होता है कि मातृविष्णु गुप्त लोगों के अधीन था। परन्तु उसका भाई धान्य विष्णु तोरमाण का आधिपत्य स्वीकार करके उसक अधीन हो गया था।

कलचुरी राज्य (550ई.–1200ई.) :–

कलचुरी राजवंश हैह्य क्षत्रिय, चेदि कलार, राय, शिवहरे, टंडन इत्यादि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। रामायण काल में सहस्त्रार्जुन, महाभारजत काल में हैदय, शिशुपाल, शंकर का वरदान प्राप्त त्रिपुरी इत्यादि इसी वंश के थे। बुन्देलखण्ड में इनके दो केन्द्र थे पूर्वी बुन्देलखण्ड में त्रिपुरी

और दक्षिणी पश्चिमी बुन्देलखण्ड में चॅदेरी। कलचुरियों की राजधानी महिस्मती (महेश्वर) रही। यह मालवा के भोज परमार और बुन्देलखण्ड के चंदेल राजवंशों के समकालीन रहे है।

कलचुरी वंश के प्रथम शासक बामराज देव को विद्वानों ने सातवीं शताब्दी के अंत में माना है। बामदेव ने डाहल की सीमा पर स्थित कालिंजर पर अधिकार कर लिया था। कालांतर में इस वश के लक्ष्मण देव के उपरान्त युवराज कोकल्लदेव द्वितीय गंगाय देव (1019–41), कणदेव (1941–101,25)यश कर्ण, जय कर्ण, नरसिंह देव, जयसिंह देव, एवं विजय सिंह कलचुरि सिंहासन रूढ हुए थे।

चंदेल राज्य :–

चंदेल यदुवंशी थे। इसके कुलदेव चंद्र बताये जाते हैं। यदुवंश की अनेक पीढ़ियों बाद दमघोष हुआ था। उसका पुत्र शेषपाल तथा शेषपाल का पुत्र चन्द्रब्रह्म था। इसने एक विशाल महोत्सव किया था। जिस स्थान पर यह महोत्सव हुआ था उसी का नाम महोबा पड़ गया था और चन्द्रब्रह्म के वंशज चंदेल कहे जाने लगे। चन्द्रब्रहम् के पश्चात् का कुछ समय का इतिहास अनुपलब्ध है किन्तु इस वंश के नन्नुक देव से स्पष्ट इतिहास प्राप्त होता है। कालचक्र की दृष्टि से यदि अवलोकन किया जाय तो बुन्देलखण्ड के वृहत् क्षेत्र पर दीर्धकालीन शासन परम्परा में केवल दो ही राजवंशों को इतिहास में अमरता प्राप्त करने को गौरव प्राप्त हुआ है। इनमें से एक चंदेल और दूसरा बुन्देलों का है। विश्वप्रसिद्ध खजुराहों के मंदिर भी चंदेलकालीन है।

नन्नुक देव (800–825 ई.) :–

इसने पड़िसरों को मऊ के युद्ध में परास्त किया था, जिससे कुछ धसान नदी के पश्चिम की ओर चले गये थे और कुछ दक्षिण की ओर आये जो लोग दक्षिण की ओर आए उन्होंने प्राचीन तेली राजा को परास्त कर अपना राज्य स्थापित किया और उचेहरा का राजधानी बनाया इसी युद्ध से

चंदेलों के राज्य की नींव पड़ी। डॉ. बोस ने नन्नुक को चंद्रवंश का प्रथम ऐतिहासिक सम्राट कहा है।

जय शक्ति विजय शक्ति (850–857ई.) :–

ये दोनों वाक्पति के पुत्र थे। वाक्पति की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र जय शक्ति सिंहासन पर बैठा। उसे जेजा भी कहते है। जय शक्ति के पुत्र न था उसकी पुत्री नट्टा देवी का विवाह कलचुरी राजा को लल्ल देव से हुआ था। जय शक्ति ने जिस भू भाग पर शासन किया वह जैजाक भुक्ति के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

जय शक्ति के निधन के पश्चात् उसका छोटा भाई सिंहासन रूढ़ हुआ। उसने बंगाल के राजा देव पाल से मित्रता कर संपूर्ण बुन्देलखण्ड पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

बारीगढ़ का विजय दुर्ग विजय शक्ति ने बनवाया था, जिसे 1746 ई. में जयाजी शिंदे ने तोड़ डाला था।

यशोवर्मन (825ई.–40ई.) :–

हर्ष की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र यशोवर्मन सिंहासनारूढ़ हुआ। इसके दो विवाह हुए थे। उसकी एक रानी का नाम नर्म्म देवी और दूसरी का नाम पुष्पा था। चन्द्रवंशीय प्रारंभिक शासन नन्हुक, राहिल, वाक्रशक्ति, जय वर्मन, विजय वर्मन एवं हर्ष ने प्रतिहारों के सामन्त के रूप में बुन्देलखण्ड में शासन किया लेकिन जब यशस्वी शासक यशोवर्मन हुआ तो उसने प्रतिहारों की सामंतशाही जंजीरों का तोड़कर स्वतंत्र शासन की स्थापना की थी जो तेरहवीं शताब्दी तक की दीर्घवधि तक चलता रहा। उसने तत्कालीन खस, मालव, चेदि, कुरू, गुर्जर, प्रतिहारों को जीतकर कालिंजर के कलचुरियों को परास्त कर और उनसे कालिंजर ले लिया था। वह कन्नौज के राजा को हराकर वहां से विष्णु की प्रतिमा छीन लाया था। खजुराहो शिलालेख से 1011 के अभिलेख में उसकी विजयों का उल्लेख है। यशोवर्मन ने अपने राज्य की सीमाएँ उत्तर में यमुना से लेकर दक्षिण में नर्मदा तक पहुँचा दी थी।

घंगदेव (940–999 इ.) :–

यशोवर्धन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र घंगदेव सिंहासन पर बैठा। धंग को अनेक इतिहासकारों ने नंद कहा है। धंगदेव शैवमत का उपासक था। उसके शासनकाल में कपिलनाथ मंदिर मडपुरा (समथर) कपिलनाथ मठ, महेबा (ओरछा राज्य) शिवमंदिर मतंगेश्वर, नॉदचॉद पुरा (पन्ना), स्वर्गेश्वर महादेव, सर्वेश्वर, गुप्तेश्वर, महादेव मठ, मऊ(छतरपुर), शिवमठ–टोला, चंदेरी, नारायणपुर, जसबंत नगर, भेलसी, देरी, कोटरा, बड़ागांव घसान(टीकमगढ) निर्मित हुए थे, जो चंदेलों के स्थापत्य कला के अद्भुत चमत्कार बने हुए ह। खजुराहों एवं छतरपुर के सूर्य मंदिर राजा घंगदेव ने बनवाए थे।

घंगदेव ने प्रतिहार, अंग, राधा कौशल आंध्र और कुचल पर आक्रमण कर चंदेलों की कीर्ति का विस्तार किया था।

गोड़वाना राज्य (गौड़ राज्य) :–

गौड़ चन्द्रवंश के क्षत्रिय थे। गोड़ों की राजधानी सबसे पहले गढ़ा (जबलपुर) मंडला में थी। गोडवाना राज्य विस्तृत भू–भाग में फैला था। बुन्देलखण्ड में यह राज्य धसान नदी से नर्मदा के मध्यपूर्वी दक्षिणी भाग में था। पूर्वकाल में गोड़ लोगों का राज्य उत्तर में देवगद और दुहाही तक पहुंच गया था। संपूर्ण गोड़वाना राज्य 52 सूबों में विभक्त था और प्रत्येक सूबों में 350 से 750 तक ग्राम थे।

गढ़ामण्डल के मोतीमहल शिलालेख की वंशावली तथा रामनगर में प्राप्त वंशावली के अनुसार यादव राज 664ई. से अजर्फनदास 1491ई. तक 40 राजाओं ने राज्य किया था। अर्जुनदास की मृत्यु के बाद अमानदास उर्फ संग्रामसिंह 1491ई. में गढ़ा का राजा हुआ था।

दलपत शाह (1541–1548ई.) :–

अपने पिता संग्रह शाह की मृत्यु के पश्चात् राजा हुआ था, दलपत शाह का विवाह चंदेल राजा की कन्या दुर्गावती से हुआ था विवाह के 4 वर्ष बाद दिवंगत हो गया।

रानी दुर्गावती (1548–1563ई.) :–

पति की मृत्यु के उपरांत एवं पुत्र वीर नारायण अल्पवयस्क होने के कारण स्वयं शासन संचालन किया। उसके राजकोष में असंख्य धन था तथा प्रजा धन–धान्य से सम्पन्न थी।

रानी दुर्गावती की मृत्यु के पश्चात् दलपत शाह के छोटे भाई चंद्रशाह ने (1564–65ई.) तक, चंद्रशाह के छोटे पुत्र मधुकर शाह (1575–1590)तक, मधुकर शाह के पुत्र प्रेमनारायण(1590–1632ई.) तक, प्रेमनारायण के पुत्र हृदयशाह(1633–1704ई0) तक, इसके पश्चात् छत्रशाह (1704–1711ई.) तक, केशरीसिंह ने (1711–1722ई.)तक, नरिन्द्रशाह (1723–1731ई.)तक, महाराज शाह (1732–1743ई.), शिवराज शाह (1743–1750ई.) तक, दुर्जन शाह

(1750–1751ई.) तक, निजाम शाह ने (1771–1774ई) तक, तथा नरहरशाह ने (1771–1774ई.) तक शाह शासको ने शासन किया।

बुन्देलखण्ड के बुन्देला राज्य :–

(1) ओरछा राज्य :– रूदुप्रताप सिंह–रूद्रप्रताप (1501–1531ई.) ओरछा राजवंश के आदि पुरूष माने जाते है। वह सिकन्दर लोदी (1489–1517), इब्राहिम लोदी (1517–26) और मुगलवंश संस्थापक सम्राट बाबर (1526–30ई.) के समकालीन थे। उन्होंने इब्राहिम लोदी के समय सवा करोड का विशाल बुन्देला राज्य स्थापित कर लिया था जो कालिंजर से काल्पी तक फैला हुआ था। ओरछा का प्राचीन नाग गंगापुरी था जो पड़िहारो की राजधानी थी 1–58 रूद्रप्रताप ने नहर की सुरक्षा के लिए 12 मील के विस्तार में नगर कोट का निर्माण कराया और भव्यराज प्रसाद तथा अन्तःपुर के नाम पर एक भव्य आकर्षण नौ चौकियों नामक महल का निर्माण कराया।[55]

भारती चन्द्र(1531–54 ई.) – रूद्रप्रताप की मृत्यु के पश्चात उनके ज्योष्ठ पुत्र भारती चंद को ओरछा की गद्दी मिली। उन्होंने सिंध से टमस तथा यमुना से नर्मदा के मध्य बाला दो करोड रूपया वार्षिक आय का ओरछ राज्य बना लिया था। भारती चंद के एक पंत्र पैदा हुआ था जो उनके जीवनकाल में ही कर गया था। 1554 ई0 में उनका निधन ओरछा में हो गया था।

मधुकरशाह (1554–92ई.) – ये भारती चंद के भाई थे। ओरछा राज्य के राजा बनने के पहले ये शिवपुरी के जागीरदार थे। ये कृष्ण उपासक थे जबकि उनकी महारानी गणेश कुंवर राम उपासक थी। मधुकर शाह मथुरा से राजा माधव और जुगलकिशोर की मूर्तियां ओरछा लाये थे तथा रानी गणेश कुंवर अयोध्या से भगवान रामराजा की मूर्तियॉ लाई थी जो अभी भी रामराजा मंदिर ओरछा में विराजमान है। सन् 1592ई. में इनका स्वर्गवास हो गया। मधुकरशाह के आठ पुत्र थे जिन्हें निम्न प्रकार व्यवस्थित किया गया था।

(1) रामशाह ओरछा के राजा हुए, (2) होरलदेव को पिछोर की जागीर, (3) झुजीत को कछौआ (4) वीरसिंह को बडौनी (5) हरिसिंह देव को भसनेह (6) प्रताप राव को कौंच पहारी (7) रतन सिंह को गौर झाव (8) रनधीर सिंह

को शिवपुर की जागीर दी गयी थी। लेकिन कुछ समय बाद यह सभी अपने को स्वतंत्र राजा मानने लगे थे।

मधुकर शाह अपने धर्म के बड़े आस्थावान और मुगल शासकों के विरोधी रहे इस कारण अपने आत्मसम्मान और धर्मरक्षा के लिए मुगलों से अनेक युद्ध करना पड़े।

रामशाह (1592–1605ई.) :– रामशाह अपने अधीनस्थ जागीरदारों को दबा न सका। वे स्वतंत्र हो गये और ओरछा रियासत में 22 जागीरें हो गयी। इनमें से 7 वे इन्ही के भाई बंधु थे और अन्य 15 में परमार, कछवाह और गौड़ थे। अकबर के बाद जहांगीर ने वीरसिंह देव को ओरछा की गद्‌दी दे दी और रामशाह को चंदेरी और बानपुर की जागीर दे दी।

वीरसिंह देव प्रथम (1605–27ई.) :– वीरसिंह देव अत्यंत प्रतिभाशाली साहसी और पराक्रमी योद्धा थे। ये कुशल राजनीतिक, उदार, न्यायशील, यशस्वी, बुन्देली स्थापत्य कला के प्रणेता एवं साहित्यकारों के आश्रयदाता थे। संपूर्ण बुन्देलखण्ड एवं कुछ पश्चिम में व होलखण्ड उनके शासन के अंतर्गत था। जिसमें 81 परगने 12500 ग्राम थे जिनकी 2 करोड़ रूपये वार्षिक आय थी। वीरसिंह देव ने ओरछा को पुनः बनाया और उसका नाम जहॅागीर पुर रख दिया था। ओरछा के राजा वीरसिंह देव बड़े योग्य शासक थे बामौनी झांसी और दतिया के किले इन्हीं के बनवाए हुए है। दतिया के किले को बनवाने में 8 वर्ष 10 माह 26 दिन लगे थे और 32 लाख नब्बे हजार नौ सौ अस्सी रूपये खर्च हुये थे। सन् 1627 ई0 में 61 वर्ष की आयु में वीरसिंह देव का स्वर्गवास हो गया था।

जुझार सिंह (1627–34ई.) :– वीरसिंह देव के 12 लडकों में से जुझार सिंह सबसे बड़ा था यही सिंहासनारूढ़ हुआ लेकिन यह अत्यंत अभिमानी और संदेहशील था वि.सं.1685 में यह अपने विमाल हरदौल से किसी कारण अप्रसन्न हो गया 28 अक्टूबर 1628 को जहॅागीर की मृत्यु होने पर खुर्रम

शाहजहॉ के नाम से मुगल सम्राट बना। सन् 1662 ई0 में जुझार सिंह दक्षिण से ओरछा लौट रहे थे उन्होंने मार्ग से चौरा गढ बुर्रा पर आक्रमण कर राज्य प्रेमशाह और मंत्री जयदेव को मार डाला और उसका किला चौरागढ़ अपने राज्य में ले लिया।

प्रबंधक देवी सिंह चंदेरी (1634–36ई.) :– जुझार सिंह की मृत्यु के पश्चात शाहजहां ने चंदेरी को ओरछा का प्रबंधक बना लिया और तब औरंगजेव ओरछा आया उसने अनेक भवनों और चतुर्भुज मंदिर के अग्रभाग को गिरवा दिया। जब बुन्देला जागोरदारों ने देवीसिंह का विरोध करके जुझार सिंह के अल्पायु पुत्र पृथ्वीराज को राजा बनाने का निश्चय किया तब राजा देवी सिंह ओरछा छोडकर चंदेरी चले गये।

पहाड़सिंह (1641–53ई.) :– शाहजहॉ के द्वारा पहाडसिंह को ओरछा का राज देने के बाद सं. 1708 में चौरा की जागीर भी दे दी गयी साथ ही उसका एक हजारी मनसव भी बढाया गया।

पहाड़ सिंह के पश्चात् सुजान सिंह ने 1653–72ई तक इंद्रमणि ने 1672–75ई. तक, यशवंत सिंह ने 1675–84ई. तक भगवंत सिंह 1684–89ई. तक, उदोतसिंह 1689–1786ई. तक पृथ्वीसिंह ने 1736–53ई. तक, सामंत सिंह न 1753–65ई. तक हरी सिंह 1765– 67ई. तक, पजन सिंह 1767–72ई. तक, मानसिंह 1772–75 इ. तक, भारती चंद ने 1775–76ई. तक 1765 से 1775ई. तक 10 वर्ष के मध्य 4 अस्थिर राजा हुये जो मरोठो के आक्रमण का सामना करने में सक्षम न हुये, विक्रमाजीत सिंह 1776–1817ई. तक धमपाल सिंह 1817–34ई, तेजसिंह 1834–41ई. तक, सुजान सिंह द्वितीय ने 1841–54ई. तक समीर सिंह 1854–74ई. तक, प्रताप सिंह 1874–1930ई. तक, ततपश्चात वीरसिंह देव द्वितीय ने 1930 से 1956ई. तक बुन्देला शासकों ने ओरछा राज्य पर राज किया।

चंदेरी बानपुर – सन् 1609ई. में मुगल सम्राट जहॉगीर ने महाराज वीरसिंह देव (प्रथम) के भाई रामशाह को बार की जागीर प्रदान की थी। 1612ई. में उनकी मृत्यु हो गयी।

दतिया राज्य :– ओरछा के राजा वीरसिंह देव प्रथम (1605–27) के 12पुत्रों में से एक पुत्र भगवान दास थे जिन्हें पलेरा की जागीर प्राप्त हुई थी। सन 1826 में जब भगवान दास आगरा से लौटे तो उनके पुत्रों ने पलेरा में प्रवेश न करने दिया।

पारिवारिक कलह टालने के उद्‌देश्य से वीरसिंह देव ने बडौनी जागीर खर्च के लिए दतिया का अपना महल निवास के लिए और 4 सरदार 300 घुडसवार रक्षा के लिए देकर दतिया भेज दिया। आगे चलकर उन्होंने अपनी जागीर का विस्तार सिन्ध से बेतवा तक कर लिया सन् 1655 में भगवान दास की मृत्यु हो गयी।

भगवान दास की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र शुभकरण ने (1655–83ई0) तक, शुभकरण के बड़े पुत्र दलपत राव ने (1683–1707) दलपत राव के पश्चात उनके पुत्र भारती चंद ने (1707–1711ई. तक) तत्पश्चात रामचंद्र ने (1711–1736ई.), इंद्रजीत सिंह ने (1736–1762इ) शत्रुजीत सिंह ने (1763–1801ई.), पारीछत ने (1801–1839ई.) विजय बहादुर (1839–56ई.)भवानीसिंह ने (1857–1907ई.) ततपश्चात गोविंन्द सिंह ने (1907–1952ई.) तक दतिया राज्य पर शासन किया।

पन्ना राज्य :– ह्रदयशाह (1732–39ई.) अपने पिता छत्रसाल के समय गढ़ाकोटा में रहा करते थे जिसके पास उन्होंने हृदय नगर ग्राम भी बसा लिया था। ये विलासी प्रवृत्ति के राजा थे। हृदयशाह क पश्चात् सभासिंह (1739–52ई.), अमानसिंह ने (1752–58ई.), हिन्दूपत ने (1758–76ई.), अनिरूद्ध सिंह ने (1776–80ई.), घोकल सिंह ने (1758–98ई.), किशोरी सिंह ने (1798–1834ई), हरवंशराय (1834–49ई.) नृपतिसिंह (1849–70ई.),

रूद्रप्रताप (1870–93ई.), लोकपाल सिंहने (1893–97ई.), माधवसिंह ने (1897–1902ई.), तक आर यादवेन्द्र सिंह ने (1902–64 ई.) तक पन्ना राज्य में शासन किया।

जैतपुर राज्य :– पन्ना के महाराज छत्रसाल ने बॅटवारे में जैतपुर राज्य अपने द्वितीय पुत्र जगतराज (1732–48ई.) को दिया था, जगतराय की मृत्यु के पूर्व ही उनके ज्येष्ठ पुत्र कीरत सिंह को जैतपुर का राज्य और शेष पुत्रां को जागीरें दी गई थी।

सन् 1758 में जगतराज की मृत्यु के पश्चात् कीरत सिंह के छोटे भाई पहाड़सिंह ने राज्य के कामदारों एवं सैनिकों को अपने पक्ष में भर जैतपुर गद्दी पर अधिकार कर लिया। सन् 1765ई. में पहाड़सिंह की मृत्यु के पश्चात गजराजसिंह ने 1765 से 1789ई. तक, केशरीसिंह ने 1789 से 1813ई. तक, पारीछत ने सन् 1813 से 1843ई. तक शासन किया इसके पश्चात सन 1843 में राज्य से च्युत कर देने के बाद जैतपुर राज्य धुन्धासिंह के नाती लक्ष्मण सिंह के पुत्र खेतसिंह को रतनसिंह की अनुशंसा पर दे दिया गया था। सन 1849ई. में खेतसिंह के निःसंतान निधन होने पर कंपनी सरकार ने उत्तराधिकारी के अभाव में जैतपुर राज्य का विलय कंपनी राज्य में कर दिया था।

अजयगढ़ राज्य :– जैतपुर के राजा पहाड़सिंह ने बॉदा अजयगढ़ का भू–भाग अपने भतीजे गुमानसिंह को दे दिया था। कालान्तर में ग्रह कलह के कारण गुमान सिंह ने बॉदा का भू–भाग भतीजे वखत सिंह को दिया था। बखत सिंह ने अपना शासन सन् 1792ई. से 1837ई. तक चलाया इसके पश्चात् माधवसिंह ने सन 1837ई. से 1849ई. तक महीपत सिंह न सन् 1849ई. से सन् 1853ई. तक, विजय सिंह ने सन् 1853ई. से 1855इ. तक अजयगढ राज्य में शासन किया। सन् 1855ई. से 1858ई. तक राज्य में अशांति रही तत्पश्चात् विजय सिंह के पिता महीपत सिंह की रानी के कथनानुसार रंजोर सिंह को अजयगढ

का राजा स्वीकार किया गया। राजा की अल्पवयस्क अवस्था के कारण रानी महीपत सिंह को संरक्षक बनाया गया। रंजोर सिंह ने सन् 1859ई. से 1918ई. तक ततपश्चात रंजोर सिंह के पुत्र भोपाल सिंह ने 1818ई. से 1841ई. तक तथा सन् 1841 से 1858ई. तक पुण्यपाल ने अजयगढ राज्य में शासन किया।

चरखारी राज्य – चरखारी नगर का विकास जैतपुर के राजाजगतराय (1732–58) के समय हुआ था। उनके पश्चात् कीरतसिंह के द्वितीय पुत्र खुमान सिंह को चरखारी क्षेत्र का राज्य 1765ई. में दिया गया। खुमान सिंह ने 1765ई. से 1782ई. तक ततपश्चात् विजय बहादुर ने सन् 1782ई. से 1829ई. तक तथा रतनसिंह ने सन् 1829 से 1862ई. तक तक चरखारी राज्य में शासन किया।

बिजावर राज्य – जैतपुर के संस्थापक राजा जगतराय के पुत्र पहाड़सिंह ने भाई वीरसिंह को विजावर का 1 लाख रूपया का भू–भाग दिया था, वीरसिंह की मृत्यु के पश्चात सन 1793ई. से 1810 ई. तक केशरी सिंह ने, सन् 1810ई. से 1833ई. तक रतन सिंह ने सन 1833ई. से सन् 1847ई. तक लक्ष्मण सिंह ने सन 1847ई. से 1899ई. तक भानुप्रताप सिंह ने, सन् 1899 से 1940ई. तक सावंतसिंह ने तथा 1940 से 1983ई. तक गोविन्द सिंह ने बिजावर राज्य में शासन किया।

शाहगढ़ राज्य :– सन् 1744ई. में पृथ्वीराज ने (1744ई. सन् 1772ई.) अपने भाइ पन्ना के राजा सभा सिंह (हृदयशाह के पुत्र) से तीन लाख रूपये देकर शाहगढ क्षेत्र प्राप्त कर शाहगढ राज्य स्थापित किया था। तत्पश्चात पृथ्वोराज के पुत्र हरीसिंह ने सन् 1772ई. से 1785ई. तक, मर्दन सिंह ने सन् 1785 से 1810 ई. तक, अर्जुन सिंह ने सन् 1810 से 1842 ई. तक एवं बखतवली सिंह ने सन् 1842 से 1858ई. तक शाहगढ़ राज्य का शासन किया।

सागर राज्य :– सन् 1735 में बाजीराव पेशवा ने छत्रसाल से बुन्देल खण्ड का तृतीयांश लेकर अपने निर्भीक और बलवान रसोइए रत्नगिरि जिले के नेवरे

ग्राम के कराणे ब्राहम्ण गोविन्दराव बल्लाल खैर को बुन्देलखण्ड के मराठी भू–भाग का सूबेदार नियुक्त किया था।

सागर राज्य में गोविन्द बल्लाला खैर ने सन् 1735 से 1761 ई. तक, बालाजी गोविन्द ने 1762ई. से सन् 1800ई. तक, रधुनाथ राव आबा साहब ने सन् 1800 से सन् 1802ई. तक बलवंतराव बाबा साहब ने सन् 1802 से 1818ई. तक शासन किया। बलबंत राव के पश्चात् 11 मार्च 1818ई. को विनायक राव ने आत्मसमर्पण कर दिया कंपनी सरकार ने सागर का विलय अपनी राज्य में कर लिया।

झॅासी राज्य :–मराठों और बुन्देलों के मध्य समझौता हुआ इसके फलस्वरूप झॅासी बरूआ सागर, तथा मऊरानीपुर के क्षेत्र मराठों को प्राप्त हो गये।

नारोशंकर के पश्चात् सन् 1757ई. में रधुनाथराव हरी निवालकर झॅासी के सूबेदार हुये। रधुनाथ राव के निधन के पश्चात् उनके छोटे भाई शिवराज भाऊ ने 1794 से 1815ई. तक, रामचन्द्र राव ने सन् 1815 से 1835ई. तक, रघुनाथ राव ने सन् 1835 से 1838ई. तक एवं कोर्ट ऑफ वार्डस ने 1832 से 1842ई. तक झॅासी पर राज्य किया।

सन् 1851 में 16 वर्ष की आयु में लक्ष्मीवाई के एक पुत्र हुआ जो तीन माह पश्चात् स्वर्गवासी हो गया। वृद्धावस्था में पुत्र शोक के कारण अस्वस्थ गंगाधर ने भविष्य में गद्दी की उत्तराधिकारी के लिये 20.11.1953 को झांसी के राजनीतिक प्रतिनिधि मेजर एलिश के समक्ष अपनी सौतेली सास चिमणाबाई के भाई आनंदराव वासुदेव गुरसराय वालों को जो वासुदेव शिवराम निवालकर के पुत्र थे। जिन्हें गोद लिया था और पुत्र का नया नाम दामोदर निवालकर रखा गया था। 21.11.1953 को गंगाधर का स्वर्गवास हो गया।

लक्ष्मीबाई ने लार्ड डालहौजी से दामोदर राव को झांसी का राज्याधिकारी स्वीकार करने का आवेदन दिया जिसे लार्ड डलहौजी ने अस्वीकार कर झॅासी का विलय कम्पनी राज्य में कर लिया।

जालौन (काल्पी) :– सागर के सूबेदार गोविन्द बल्लभ खैर की ओर से उत्तरी– पश्चिमी बुन्देलखण्ड के राजाओं से चौथ वसूल करने हरी विठ्ठल विछूंरकर भी थे इन सरदारों ने जालौन काल्पी, हमीरपुर क्षेत्र से 96 लाख रूपया गोविन्द बल्लभ खैर ने दिया था। सन् 1761ई. में पानीपत के तृतीय युद्ध में अफगानों ने गोविन्द बल्लाल को मार डाला तब बालाजी गोविन्द सागर के तथा छोटे पुत्र गंगाघर गोविन्द काल्पी के सूबेदार बन गये।

गंगाधर गोविन्द ने सन् 1761 से सन् 1800ई. तक, गोविन्द गंगाघर उर्फ नाना साहब ने सन् 1800ई. तक गोविन्द गंगाधर उर्फ नाना साहब ने सन् 1800ई. 1822ई. तक एवं बालाजी गोविन्द ने सन् 1822ई. से 1832ई. तक काल्पी राज्य पर राज किया।

बॉदा राज्य :– सागर के सूबेदार गोविन्द बल्लाल खैर की ओर से हमीरपुर के कुछ भाग सहित बांदा परिक्षेत्र में कृष्णा अनंत ताम्बे नियुक्त था। सन् 1766–67 में हिम्मत बहादुर गुसाई ने लखनऊ के नबाव शुजाउद्दौला से करीम खॅा के नेतृत्व में सैनिक सहायता प्राप्त कर बॅादा पर आक्रमण कर दिया। पेशवा माधवराव नारायण राव ने बुन्देला राजाओं पर नियंत्रण स्थापित करने के लिये अली बहादुर को 1789ई. में बॉदा का नबाव बनाकर भेजा था। उसने हिम्मत बहादुर गुसाई को राज्य देने का लालच देकर अपन पक्ष में कर दोनों ने संयुक्त रूप से बॉदा पर आक्रमण कर गुमान सिंह को पराजित कर दिया और बॉदा को अपना ठिकाना बनाकर, पन्ना, बिजावर, चरखारी, अलीपुर, जैतपुर इत्यादि राज्यों पर आक्रमण कर अपने अधीन कर भारी कर बसूल किये।

अलीबहादुर की मृत्यु के पश्चात जुल्फिकार अली को बांदा का नबाव घोषित कर दिया सन् 1849ई. में जुल्फिकार अली की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र अली बहादुर नबाव हुआ था।

छतरपुर राज्य :– इस राज्य की स्थापना सोने जू ने 1785ई. के मध्य की थी। सन् 1790–93 के भव्य मराठा सूबेदार अलीबहादुर और उसके सहायक हिम्मत बहादुर के आक्रमणों से उत्पन्न अराजकता का लाभ उठाकर प्रताप सिंह जू ने पन्ना, विजावर एवं चरखारी राज्यों की थोड़ी–थोड़ी भूमि अधिकार में करके राज्य का विस्तार कर लिया।

छतरपुर राज्य में प्रताप सिंह ने सन् 1816 से 1854ई. तक, जगतराय ने सन् 1854ई. से 1867इ. तक, विश्वासनाथ सिंह ने सन् 1867 से 1932ई. तक एवं भवानी सिंह ने सन् 1932ई. से 1948 तक शासन किया। 19.04.1948 को इस राज्य का विलय विन्ध्यप्रदेश में किया गया।

नौगवां रिबई राज्य – यह यादव राज्य जैतपुर के छुटई स्टेशन के निकट था जिसका संस्थापक अराजक किलेदार लक्ष्मण सिंह दौआ था जिसे केशरी सिंह ने अजयगढ का किलेदार बना दिया था।

तत्पश्चात् जगत सिंह ने सन् 1809 से 1867ई. तक, सवाई लाड़ली दुलैया ने सन् 1867ई. तक 1882 ई. तक, विश्वनाथ सिंह ने सन् 1882ई. से 1937ई. तक एवं रतन सिंह ने सन् 1937 से 1948 तक नौगवां रिबई राज्य का शासन किया।

गौरिहार राज्य :– अजयगढ के राजा गुमान सिंह के समय पं. राजाराम तिवारी भूरागढ़ के किलेदार थे। राजाराम तिवारी बाद में गुमान सिंह से बिगड़कर घीरे धीरे स्वतंत्र हो गये तत्पश्चात राजघर रूद्रसिंह ने सन् 1846 से 1877ई. तक, राजबहादुर श्यामले प्रसाद ने सन् 1877 से 1904ई. तक, अतिपाल सिंह ने सन् 1904 से 1935 ई. तक एवं अवधेन्द्र प्रताप सिंह ने सन् 1935 से 1948 तक गौरिहार राज्य का शासन किया।

कालिंजर के चौबयाना राज्य :– पन्ना के राजा सरमेद सिंह के समय में कलिंजर में राम किसुन चौबे किलेदार थे। बाद में वे यहॅा के स्वतंत्र राज्य बन बैठे। यह जुझौति ब्राह्मण थे। इनकी प्रवृत्त उदण्ड और अराजक थी। कालान्तर में यह राज्य रामकृष्ण चौबे के सात पुत्रों तथा एक भाग परिवार के कामदार गोपाल लाल कायस्थ सहित आठ भागों में विभाजित कर दिया गया।

बुन्देलखण्ड का राजनीतिक इतिहास

बुन्देलखण्ड का क्रमबद्ध इतिहास मौर्य साम्राज्य के साथ आरम्भ होता है। मौर्यवंश में चन्द्रगुप्त मौर्य बिन्दुसार और अशोक का नाम उल्लेखनीय है। मौर्य साम्राज्य के चार विभाग थे प्रत्येक विभाग की राजधानी में एक शासक होता था। बुन्देलखण्ड उज्जैन के एक शासक के अधीन था। अशोक के शासन काल में धर्म प्रचारार्थ लिखाये गये शिलालेख अब भी इसमें मिलते है।

श्री उमाशंकर शुक्ल के अनुसार जब समुद्रगुप्त दिग्विजय को निकला तो वह सागर जिले से होता हुआ दक्षिण को गया था। हटा तहसील में 24 सोने के गुप्तवंशीय सिक्के और एरन में ''रजभोग नगर'' इस बात के प्रमाण है।

अशोक के पश्चात् मौर्य शासक अपने साम्राज्य की रक्षा न कर सके। पुराणों से ज्ञात होता है कि मौर्यवंश का अंतिम राजा वृहदृथ अपने सेनापति पुष्यमित्र (पुष्यमित्र) द्वारा मारा गया और शुंग वंश की स्थापना हुई।

डॉ. बलभद्र तिवारी ने शुंग वंश का संबंध बुन्देलखण्ड से स्थापित करने हेतु लिखा है–''शुंगवंश भार्गव च्यवन के वंशधर शुनक के पुत्र शौनक से उद्भूत है, ये दक्षिण बुन्देलखण्ड से संबंधित रहे है। शुंग लोग 36 वर्ष ही राज्य कर पाये।

शुंग वंश के पश्चात् बुन्देलखण्ड पर नागों शकों आदि विभिन्न शासकों का शासन रहा। डां बलभद्र तिवारी के अनुसार –भारतीय तथा बुन्देलखण्ड के इतिहास में मौर्यो के उपरान्त बाकाटकों और तत्कालीन गुप्तों का महत्वपूर्ण योगदान है।

डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी लिखते है–''बाकाटकों का राजकुल गुप्तों के समकालीन सबसे शक्तिमान राजवंशों में से एक था। उनके अभिलेखों तथा पुराणों से सिद्ध है कि अपने उत्कर्ष के काल में उनका प्रभुत्व संपूर्ण बुन्देलखण्ड, मध्यप्रदेश, बरार, आसमुद्र, उत्तरी दक्षिण (दक्खन) केऊपर था। इसके अतिरिक्त दुर्वल पडोसी राज्यों के ऊपर भी उनका आधिपत्य प्रतिष्ठित था।

सन् 345ई. के पश्चात बाकाटक वंश गुप्तों के प्रभाव में आया। पॅाचवी शताब्दी के मध्य तक वाकाटक गुप्तों के आश्रित रहे।

गुप्तों के शासनकाल में बुन्देलखण्ड की सीमाओं में विस्तार हुआ। स्कन्द गुप्त के शासनकाल में ही हूणों के आक्रमण प्रारम्भ हो गये थे। हूणों का भी कुछ समय तक इस प्रदेश पर शासन रहा। हूणों के पश्चात् यशोवर्धन और हर्षवर्धन का शासन है। ''हर्ष के काल में बुन्देलखण्ड ही नहीं उसके द्वारा समस्त शासित भू–भसाग की विशेष उन्नति हुई। चीनी यानी ह्वेनसांग इसी समय में भारत आया था उसने अपनी यात्रा में जुझौति (बुन्देलखण्ड) महेश्वरपुरा और उज्जैन की समृद्धि का अच्छा वर्णन किया है।

हर्ष के पश्चात् उसका राज्य भी छिन्न भिन्न हो गया और समस्त उत्तर भारत छोटे छोटे राज्यों में बंट गया।

हर्ष के पश्चात् बुन्देलखण्ड में कलचरियों और चन्देलों का भी अधिपत्य रहा। ''हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद चन्देलों के समय में बुन्देलखण्ड की लाक्षणीय उन्नति हुई। चन्देल शासन के तीन सोपान हैं हर्ष से धंग का उदीयमान शासनकाल धंग से विजयपाल तक समृद्धिपूर्ण शासनकाल तथा विजयपाल से पृथ्वीवर्मा तक पतनोन्मुख काल। चन्देलों का स्वर्णकाल धंग के समय से माना जाता है।

चन्देलों ने विस्तृत भू–भाग पर अपना अधिकार किया। चन्देलों के अर्थात् रहने वाला भाग घसान नदी के पूर्व और विन्ध्यांचल पर्वत के उत्तर

पश्चिम में था। उत्तर में यह यमुना नदी और दक्षिण में केन नदी तक फैला हुआ था। चंदेलवंश का शासनकाल नवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। इस वंश के संस्थापक नानक देव थे। इन्हीं नानुक या नन्नुक का पौत्र जेजा अथवा जयशक्ति था जिसके नाम पर चन्देलों के राज्य का नाम जेजाकभुक्ति पड़ा।

इस वंश में अनेक प्रतापी शासक हुए जिन्होंने बुन्देलखण्ड की प्रगति और विस्तार किया।

कलचुरी राज्य :— चन्देलों के समकालीन राजनीतिक क्षितिज पर अपना महत्व स्थापित करने वाला कलचुरि वंश की उल्लेखनीय है ''कलचुरि—वंश—पुराणों के अनुसार कल्चुरि है। हृयवंशी कार्तवीर्य अर्जुन के वंशज है।'' इसके संस्थापक महाराज कोकल्ल ने जबलपुर के पास त्रिपुरी को अपनी राजधानी बनाया अतएव यह वंश ''त्रिपुरी के कल्चुरि'' नाम से भी विख्यात है।

डॉ. विवेकदत्त झो लिखते है —''हूणों के आक्रमण के दौरान अनेक राजनीतिक सांस्कृतिक केन्द्र नष्ट हो गये। बुन्देलखण्ड में राजनीतिक अस्थिरता का सूत्रपात हुआ। छोटी छोटी रियासतों में विभक्त बुन्देलखण्ड को जिन बाह्य शक्तियों ने पद दलित किया उनमें सम्राट हर्ष, राष्ट्रकूट, दंति दुर्ग और गोविन्द तृतीय के नाम उल्लेखनीय है। अंततः त्रिपुरी के कल्चुरि नरेशों ने बुन्देलखण्ड को राजनीतिक स्थिरता प्रदान की। उन्होंने सांस्कृतिक पुनरूत्थान के सन्दर्भ में उल्लेखनीय कार्य किया।

लगभग तीन सौ वर्षो तक कल्चुरियों का शासन दक्षिणी बुन्देलखण्ड पर रहा, तत्पश्चात चन्देलों की बढती हुई शक्ति से उनका प्रभाव कम होता गया। 12वीं शती में चन्देलों और गाहडवालौ की बढती हुई शक्ति के सामने कल्चुरि वंश के अंतिम राजा नरसिंह (1155ई.), जयसिंह और विजय सिंह (1180ई.) न टिक पाए। 1200ई. में देवगिरि के राजा ने इस वंश का शासन अपने अधीन कर लिया। 14 लेकिन कल्चुरि शासकों का उत्तराधिकारी तैलोक्यमल्ल 1251ई. तक त्रिपुरी का अधिपति रहा, इस संबध में क,छ विशिष्ट

साक्ष्यों की ओर – डां. विवेकदत्त झा ने संकेत किया है वे लिखते हैं – ''झुलपुर ताम्रपत्र द्वारा प्रदत्त सूचनाओं के आधार पर इतिहास में परिवर्तन आवश्यक हो गया है। विजयसिंह देव का उत्तराधिकारी त्रैलोक्यमल्ल 1251 तक त्रिपुरी का अधिपति रहा, यह निर्विवाद है।

वस्तुतः बुन्देलखण्ड के इतिहास में कल्चुरि और चन्देल दोनों ही वंशों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ''सभ्यता और संस्कृति का इतिहास यह दर्शाता है कल्चुरियों ने साधना, धर्म और चिन्ताधारा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परम्परायें स्थापित की थी, जिन्हें बाद में चन्देलों ने और आगे बढ़ाया।

13वीं शताब्दी के अंत तक कल्चुरि और चन्देल दोनों ही प्रभावहीन व शक्तिहीन हो चले।

बुन्देलों का उद्भव और विकास :–

चन्देलों के पश्चात् बुन्देलखण्ड का राजनैतिक इतिहास मुगल सत्ता के उदय और बुन्देलों के उत्कर्ष का इतिहास है।'' विक्रम की चौदहवो शताब्दी में काशी के गहरवार वंश की एक शाखा का प्रादुर्भाव हुआ। इसने पहले जालौन के मुहीनी ग्राम को अपना निवास स्थान बनाया। वहॅा से उन्होंने इतिहास प्रसिद्ध गढकुंडार नामक किले पर अपना अधिकार जमाया। इस तरह उन्होंने ओरछा राज्य की नीव डाली। यह वंश बुन्देला कहलाया। इस वंश की विवध शाखाओं का अधिकार बुन्देलखण्ड के अधिकांश भाग पर अन्त तक बना रहा।

बुन्देलखण्ड के आदि संस्थापक हेमकरण माने जाते है, जो 1100ई. के पूर्व हुए इसी वंश की नवीं या दसवीं पीढ़ी में महाराज रूद्रप्रताप हुए।'' बावर की मृत्यु के लगभग एक वर्ष पश्चात् बुन्देला राजा रूद्र प्रताप ने अप्रैल 1531ई. में बुन्देलों की प्रसिद्ध राजधानी ओरछा की नींव डाली।

महाराज रूद्रप्रताप के पश्चात उनके ज्येष्ठ पुत्र भारती चन्द्र (सन् 1539) ने शासन संभाला। इनका शासनकाल 1539 से 1554ई. तक रहा।

इस शासनकाल में भारतीचन्द्र को विभिन्न मुगल शासकों से युद्ध करना पडे, किन्तु अपने भाइयों की मदद से अपनी स्थिति को सुद्रढ बनाये रखा। भारती चन्द्र को अपने राज्य की सीमाओं के विस्तार के लिए उत्तर भारत के मुगल शासकों की प्रतिकूल परिस्थितियों का लाभ भी मिला।

सन् 1954 में भारती चन्द्र की मृत्यु के पश्चात् उनके अनुज ''मधुकर शाह'' ने शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली और कुछ समय पश्चात् 1556 में हुमांयु की मृत्यु के पश्चात् अकबर ने शासन संभाला।

मुगल शासकों की राज्य विस्तार की आकांक्षाएॅ बड़ी प्रवल थी। बुन्देलखण्ड पर भी उनके आक्रमण होते रहते थे। मधुकर शाह स्वतंत्रता प्रेमी शासक थे। अन्य बुन्देला शासकों की तरह वे मुगलों की अधीनता स्वीकार करना नहीं चाहते थे। परिणामतः अनेक बार उन्हें मुगल सेना का सामना करना पड़ा। सन् 1573 में सैयद महमूद खॅा के नेतृत्व में मुगल सेना में मधुकर शाह पर आक्रमण किया।

सन् 1577 में अकवर ने सादिक खॅा के नेतृत्व में मुगल सेना ओरछा भेजी। इसी युद्ध में मधुकरशाह के पुत्र होरिलदेव बीर गति को प्राप्त हुए। सन् 1578ई. में मधुकरशाह को अकबर की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। लेकिन शीध्र ही उनकी मुगल विरोधी कार्यवाहियॉ प्रारम्भ हो गई। परिणाम स्वरूप शहाबुद्दीन, आसकरन, शाहजादा मुराद के नेतृत्व में हुए मुगल आक्रमणों का सामना मधुकरशाह को करना पड़ा। सन् 1591ई. में मालवा के सूबेदार शाहजादा मुराद के आक्रमण के समय मधुकरशाह ने चम्बल के धने जंगलों का आश्रय लिया। सन् 1592ई. के आसपास इनकी मृत्यु हो गई।

मघुकर शाह के होरलदेव, नरसिंह देव, रतनसेन, प्रतापराव, वीरसिंह देव, हरिसिंह देव क्रमशः आठ पुत्र थे। इनमें से बीरसिंह देव की मधुकर शाह ने 1592ई. में दतिया से लगभग छःमील दूर उत्तर पश्चिम में बडौनी नामक स्थान की जागीर दी।

वीरसिंहदेव की महात्वाकांक्षाओं एवं मुगलशासक विरोधी कार्यवाहियों के कारण भाई रामशाह व सम्राट अकबर से सदा विरोध रहा, लेकिन शाहजादा सलीम का खुदा संरक्षण उन्हें मिला।

शाहजादा सलीम जब जहॅागीर के नाम से सिंहासन रूढ हुआ, तत्पश्चात वीरसिंह देव ने अनेक मुगल अभियानों में वीरतापूर्वक अपना सार्थक सहयोग दिया। ''अंत तक वीरसिंह देव–जहॅागीर के संबंध मधुर बने रहे आर उनकी मृत्यु जून–जुलाई 1627ई. में जहॅागीर कील मृत्यु (अक्टूबर 1627) के तीन चार माह पूर्व हो गई। वीरसिंह देव के पश्चात् उनकी ज्येष्ठ पुत्र जुझार सिंह को ओरछा की गद्दो मिली। ये ग्यारह भाई थे। समस्त राज्य जागीरों के रूप में भाइयों के बीच बट गया।

बुन्देल राजवंश में महाराज चम्पतराय का नाम भी महत्वपूर्ण है। डॉ. तिवारी के शब्दों में ''औरंगजेब की सहायता दारा के विरूद्ध करने पर इन्हें ओरछा के जमुना तक का प्रदेश जागीर में दिया गया। भले ही ये दिल्ली दरबार के उमराव बन गये पर सदैव बुन्देलखण्ड को स्वाधीन कराने में व्यस्त रहे। इसी क्रम में ये औरंगजेब से भिड़ गये। बुन्देलों ने चम्पतराय का साथ नहीं दिया, फलतः बुन्देलखण्ड को शाही सेना द्वारा रौदे जाने पर उन्होंने सन् 1964 में आत्महत्या कर ली।

महाराज चम्पतराय के पश्चात् उनके पुत्र छत्रसाल ने इस राज्य पर शासन किया। चम्पतराय के उपरांत महाराज छत्रसाल की बुन्देलखण्ड की स्वतंत्र सत्ता की हिमायत अविस्मरणीय है।

छत्रसाल ने मुगलों की आधीनता को स्वीकार नहीं किया। औरंगजेब ने छत्रसाल का दबाने की अनेक चेष्टायें की किन्तु सभी चेष्टायें व्यर्थ साबित हुई।

सन् 1707ई. में औरंगजेब की मृत्यु हो गई और बहादुरशाह शासक बना। छत्रसाल के बहादुर शाह से अच्छे संबंध रहे।

छत्रसाल के शासनकाल में ही मराठों का प्रभाव बुन्देलखण्ड पर पड़ने लगा था सन् 1731 में छत्रसाल की मृत्यु के पश्चात् उनका राज्य हिरदेशाह जगतराय और पेशवा बाजीराव में बंट गया। पेशवा को दत्रसाल ने धर्मपुत्र माना था। पेशवा को बुन्देलखण्ड के कालपी, हटा, हृदयनगर, जालौन, गुरसराय, झॅासी, गुना, गढ़ाकोटा, और सागर के तथा अन्य छोटी छोटी जागीरं मिली इस तरह बुन्देलखण्ड में मराठा शक्ति का उदय हुआ।

मराठा शासकों में बाजीराव पेशवा के पश्चात् बाजीराव पेशवा (नाना साहब) गोविन्द राव पंत का प्रभाव पड़ा। अहमदशाह, अबदाली और मराठों के बीच हुए युद्ध में गोविन्द राव पंत की मृत्यु हो गई। उनके पश्चात् वाला जी गोविन्द और गंगाधर गोविन्द ने बुन्देलखण्ड का शासन सम्भाला किन्तु उन्हें सफलता न मिली। मराठा शक्ति का भी क्रमशः हृास होने लगा।

इस बीच अंग्रेजों ने मुगल सत्ता के अपकर्ष, मराठों और बुन्देलों की कमजोर स्थिति को देखते हुए संवत् 1885 में ''कालपी'' पर अपना अधिकार कर लिया। संवत् 1839 में कालपी पर पुनः ''मराठों का अधिकार हो गया। गौड़ शासक भी अपना अस्तित्व बनाये हुये थे। बालाजी गोविन्द ने रधुनाथ राव (अप्पा साहब) को सागर में नियुक्त किया। गौड़ शासकों ने अपने हार हुए प्रदेशों को पुनः जीता।

इन युद्धों में मोरोपन्त और रधुनाथ राव की वीरता उल्लेखनीय थी।मोरो पन्त की मृत्यु (संवत् 1884) के पश्चात् उनके पुत्र विश्वासराव सागर सूबे का कार्य देखने लगे। इसी समय होल्करों ने सागर पर अपना अधिकार कर लिया मोरोपन्त की मृत्यु (संवत् 1884) के पश्चात् उनके पुत्र विश्वासराव सागर सूबे का कार्य देखने लगे। इसी समय होल्करों ने सागर पर अपना अधिकार कर लिया। रधुनाथ राव ने नागपुर के भौसलों की सहायता से होल्करों को पराजित किया। रधुनाथ राव के समय में ही संवत् 1824ई. में

प्रथ्वीसिंह के वंशज मर्दनसिंह शाहगढ और गढ़कोटा के राजा बने। इन्होंने मराठों को दो बार हराया।

पेशवा के वंशज हिम्मत बहादुर और अली बहादुर के नाम उल्लेखनीय है। ''हिम्मत बहादुर की सहायता से ही अंग्रेजों ने बुन्देलखण्ड पर कब्जा किया। मराठों और अंग्रेजों की कई बार लडाई हुई। वि.सं. 1875 तक बुन्दलखण्ड का समस्त प्रदेश अंग्रेजों के शासन में आ गया।

अंग्रेजों ने वर्षो इस भू–भाग पर अपना अधिकार कायम रखा। संवत् 1905 में लार्ड डलहौजी ब्रिटिश राज्य के गर्वनर बने। इसी समय अंग्रेजों ने अपनी कूटनीतिक चालों व शक्ति से क्रमशः पंजाब, सतारा, को अपने राज्य मे मिला लिया। रानी लक्ष्मीबाई सागर के कमिश्नर की ओर से झॅासी का राज्य प्रबन्ध देखती थी।

बुन्देलखण्ड का 1857 का सैनिक विद्रोह भारत के स्वतंत्रय आन्दोलन में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ''अंग्रेज सरकार के विरूद्ध सेना में खबर फैल गई कि वह गाय और सुअर की चवें लगे कारतूस चलवाती है, इसी से सेना में विद्रोह फैल गया। पहले बरहमपुर की सेना ने विद्रोह किया, फिर मेरठ की सेना ने इसके बाद दिल्ली मुर्शिदाबाद, लखनऊ, इलाहाबाद, काशी, कानपुर, झॅासी में विद्रोह हुआ।

बुन्देलखण्ड में भी इस सैनिक विद्रो ने बहुत जोर पकड़ा। ''सागर की 42 नं. पल्टन बागी हो गई। बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना लेकर खुरई तहसील और नरयावली के परगने पर अधिकार कर लिया। खुरई में अंग्रेजों की तरफ से अहमद बख्श तहसीलदार था। यह भी मर्दन सिंह से मिल गया। मर्दन सिंह ने ललितपुर चंदेरी पर कब्जा किया।

शाहगढ़ के राजा बख्तबली ने भी विद्रोह कर दिया। राहतगढ पर आभापानी गढ़ी (भोपाल) के नबाव ने अधिकार कर लिया। सर ह्यूरोज सागर के विद्रोह को दबाने के लिये ''मऊ'' से सेना लेकर आया। मालथौन में मर्दन

सिंह की सेना ने उसे रोक लिया। ह्यूरोज ने सागर की 39नं. की पल्टन की सहायता से मर्दन सिंह को हरा दिया और बालवेट पुनः अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। झॉसी आर कालपी में यद्यपि उन्हें कठिनाइयॉ आई।

रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों का जमकर मुकावला किया, झॉसी से रानी कालपी पहुंची, वहॉ बख्तवली मर्दन सिंह की मदद से पुनः अंग्रेजों से टक्कर ले रहे थे। काल्पी से रानी ग्वालियर पहुंची, ग्वालियर के सिंधिया को हराकर रानी ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया। सर ह्यूरोज ने ग्वालियर पर भी आक्रमण कर दिया–''तात्या और रानी ने भीषण युद्ध किया इसी युद्ध में रानी की मृत्यु हो गई। तात्या को बंदी बनाया गया और बाद में फॉसी दी गई। राजविद्रोह शान्त हो जाने पर बुन्देलखण्ड के सारे प्रदेश अंग्रेजी राज्य में आ गये। वास्तव में 1859 का विद्रोह पिछली शताब्दी के राजनैतिक आर्थिक और धार्मिक कृत्यों की प्रक्रिया था। जिसमें ईस्ट इंडिया कंपनी के सारे कारनामें प्रतिच्छादित है।

सन् 1857 की क्रांति के पश्चात प्रथम विश्वयुद्ध के समय स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड पुनः सक्रिय हुआ था। झॉसी के परमानन्द जी, कत्तार सिंह, विष्णु गणेश पिंगले दतिया के दीवान नाहरसिंह, खानिया धाना के श्रीमान्, खलक सिंह जू देव, सागर के वासुदेव राव सूबेदार, आदि व्यक्तियों ने अंग्रेजी शासकों को एक बार फिर कपित कर दिया।

वस्तुतः बुन्देलखण्ड ने भारत के राजनैतिक इतिहास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह किया है। स्वतंत्रता की जिस भावना का सूत्रपात वीरसिंह देव ने किया था, मधुकर शाह और चम्पतराय ने उसे आगे बढाया, छत्रसाल ने उसमें शक्ति फूॅकी और स्फूर्ति बनाकर मर्दन सिंह, बख्तबली के द्वारा वह अनेक शहीदों को प्राप्त हुई। रानी लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे आदि के उत्सर्ग उसे अमर बना गये। कालान्तर में वहीं बीसवीं शती के प्रारम्भिक दशकों में जन आन्दोलन का आधार बन गई।

(स) बुन्देलखण्ड का नामकरण :–

''बुन्देलखण्ड'' भू–भाग प्रागैतिहासिक काल में भी अपने अस्तित्व में था और आज भी है। यह वह भू–भाग है जो प्रमुख रूप से बुन्देले राजपूतों की निवासभूमि अथवा उनके द्वारा शासित भूमि रहा है। ऐतिहासिक विवरण से ज्ञात होता है कि 'बुन्देल' अथवा बुन्देलाशब्द सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, अग्निवंशी, चेदि, चौहान, गहरवार आदि वर्ग विशेष के क्षत्रियों का द्योतक नहीं है। बुन्देलखण्ड में बसने के कारण वहॅा का क्षत्रिय वर्ग विशेष 'बुन्देला' नहीं कहलाया, इसके विपरीत बुन्देलों की निवासभूमि होने के कारण यह भू–भाग 'बुन्देलखण्ड' कहलाया।

बुन्देलखण्ड नामकरण के संबंध में अनेक मान्यताएॅ है। प्रथम मान्यता के अनुसार गिरिराज विन्ध्य की उपव्यका में स्थित होने के कारण यह भू–भाग बुन्देलखण्ड कहलाता है। इस भू–भाग का नाम 'बुन्देलखण्ड' मानने वाले 'विन्ध्य' शब्द का निर्माण मानकर कालांतर में 'बुन्देखण्ड' का नाम मानते है।

द्वितीय मान्यता के अनुसार बुन्देले इस भूभाग के भूल निवासी नहीं है। यहॅा आकर बसने के पश्चात् ही बुन्देले कहलाये। जनश्रुति है कि गहरवार क्षत्रिय महाराज हेमकरन, काशी का राज्य छिन जाने पर इस भूभाग में आये तथा पुनःश्च राज्य राज्य प्राप्ति हेतु उन्होंने विन्ध्यवासिनी देवी की आराधना की। देवी को अपना सिर समर्पित करने के लिए जैसे ही अपनी तलवार उठाीं देवी ने उनका हाथ पकड लिया, किन्तु उनके मस्तक पर तलवार की खरौंच लग ही गई और रक्त की कुछ बूॅदे भूमि देवी के सामने गिर पड़ी। अपने रक्त की बूॅद देवी को समर्पित करने वाले हेमकरन महाराज की संतान बुन्देले कहलाये तथा इनकी निवास भूमि 'बुन्देलखण्ड' नाम से संबोधित होने लगी।

सम्भवतः विन्ध्य से विन्हयेन शब्द की निष्पत्ति हुई। कालान्तर में विन्ध्येले से बुन्देले शब्द बना और इन बुन्देलों का इस भू–भाग में शासन स्थापित होने के पश्चात ही उसे बुन्देलखण्ड कहा जाने लगा। 11वीं शती

पूर्ण के महाराज हेमकरण की 10वीं पीढ़ी में 16वीं शती के लगभग मध्यकाल में महाराज रूद्रप्रताप हुये, जिन्होने सर्वप्रथम चन्देलों के अधिकार से इस भूखण्ड का कुछ भाग छीनकर अपना राज्य स्थापित किया। इतिहासकारों ने इनके शासन का आरम्भ सन् 1553ई0 (सं. 1610वि.) माना है। महाराज रूद्रप्रताप ही बुन्देल राज्य के प्रथम शासक थे।

इनके पश्चात् उनके पुत्र महाराज भारतीचन्द्र ने अपने राज्य का विस्तार उत्तर में यमुना नदी के तट तक तथा दक्षिण पूर्व में कालिंजर और महोबा तक किया। इसी काल से इस भूभाग को बुन्देलखण्ड कहा जाने लगा प्रतीत होता है। महाराज छत्रसाल बुन्देला इसी राजवंश के उत्तराधिकारी हुए। इससे शत प्रतीत होता है कि बुन्देलखण्ड का नाम चार सौ वर्षो से अधिक प्राचीन नहीं है।

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में बुन्देलखण्ड का 'जेजाक भुक्ति' के रूप में उल्लेख किया गया है। इतिहासकारों ने राजा जेज्जाक (जयशक्ति) को प्रातापशाली शासक कहकर उसका राज्य यमुना से नर्मदा तक विस्तृत बतलाया है। इसी राजा के नाम पर यह यमुना से नर्मदा तक का भाग 'जीजक' अथवा जेजक भूमि' कहलाता था। स्व0 श्रीकृष्ण बल्देव वर्मा का तर्क है कि ''बैदिक कालीन यजुर्वेदीय कर्मकाण्ड का जहॉ सर्वप्रथम अभ्युदय होने के कारण यह प्रदेश 'यजुर्होति' कहा गया था, जिसका अपभ्रष्ट रूप 'जैज–भुक्ति' है।' प्रथ्वीराज चौहान के मदनपुर के शिलालेख से प्रकट होता है कि 12वीं शताब्दी तक यह देश 'जेजाकमुक्ति' ही कहलाता था।

'बुन्देलखण्ड' का नाम 'दशार्ण देश' भी बतलाया जाता है। यह नाम 'जेजाकमुक्ति' से पूर्व का होना चाहिए। महाभाष्य के टीकाकार ने नदी विशेष तथा देश विशेष का 'दशार्ण' लिखा है। बुन्देलखण्ड दस नदियों का देश है। चम्बल,पहूज,कालीसिंधु,और कुॅवारी नदियों का संगम यमुना में होता है। इस

सीान को पंच–नद भी कहते है। शेष पॉच नदियॉ बेलवती (बेतवा), कन्दाकिनी, केन, तमसा और धसान है।

इस प्रदेश को बुन्देलखण्ड कहे जाने का कारण यहॉ की भौगोलिक स्थिति ही प्रतीत होतो है। इस प्रदेश में विन्ध्य पर्वत की श्रेणियॉ है और इस कारण यह विन्ध्येलखण्ड अथवा विन्ध्येलखण्ड कहलाया। कालांतर में विन्ध्येलखण्ड का बुन्देलखण्ड नाम प्रसिद्ध हुआ।

भारत वर्ष के इतिहास में बुन्देलों का अपना स्थान है। बुन्देलों में कितने ही प्रतापी राजा हुये जिन्होंने मुगल शासकों से डटकर लोहा लिया और अपना कीर्तिमान स्थापित किया। बुन्देलों के शासन होने के कारण ही सारे प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड पड़ गया।

वैदिक साहित्य में इस प्रदेश का नाम यजुर्होति उपलब्ध है। यही इस प्रदेश का प्राचीनतम नाम माना जाता है। कहा जाता है कि यजुर्वेदीय कर्मकाण्ड का आविर्भाव सबसे पहले इसी प्रदेश में हुआ और इसी कारण से इसका नाम ययुर्होति पड़ा और फिर अपभ्रंश होते होते अयुर्दोति शब्द बिगडकर जीजशुक्ति और जेजाकमुक्ति बन गया। कुछ साहित्यकारो का मानना है कि, बुन्देला शासक जयशक्ति के नाम से इस प्रदेश का नाम जेजाकभुक्ति पड़ा। इसी जेजाकमुक्ति शब्द का अपभ्रंश रूप जुझौति या जुझाखंड हो गया। महाभारत काल में उस प्रदेश को दशार्ण कहा जाता था। दशार्ण इस प्रदेश में बहने वाली नदी का नाम भी है जिसे आज धसान कहते है। 'दशार्ण' का शाब्दिक अर्थ है दस जल 1 अण शब्द का अर्थ है जल। कुछ विद्वान इस प्रदेश में बहने वाली दस प्रमुख नदियों के कारण इस प्रदेश का नाम दशार्ण मानते है।

इस प्रदेश के नाम चेदि' राजा चिदि के नाम से पड़ा। राजा चिदि राजा विदर्भ के पोते थे। ये यदुवंशी थे। महाभारत काल में चेदि प्रदेश का राजा शिशुपाल था। कुछ साहित्यकारों का अनुमान है कि इस चेदि शब्द से

ही चन्देल शब्द की उत्पत्ति हुई। चेदि लोग ही चन्देल कहे जाने लगे। कतिपय मान्यताओं के अनुसार चंद्रब्रह्म के वंशज चंदेले कहलाये। परन्तु इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड कभी नहीं पड़ा। इस प्रदेश पर, चेदि, मौर्य, शुंग, वाकाटक, गुप्त, कल्चुरि, चन्देल, अफगान, मुगल, गौड़, इत्यादि विभिन्न राजाओं ने राज्य किया। अंत में बुन्देले आये और उन्होंने खंगार राज्य छीन कर अपना आधिपत्य जमाया। बुन्देलों के नाम पर इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड पड़ा, जो आज भी प्रचलित है।

इतिहास वेत्ताओं ने बुन्देलखण्ड को भारतवर्ष का हृदय कहा है तो भूगोल शास्त्रियों ने विन्ध्यांचल को हिमालय से भी पुरातन बताया है। विन्ध्यांचल की तलहटी में एक विशाल बीहड़ वन है जा विन्ध्य श्रेणियों से घिरा है, जहां उच्च तुग श्रृंगों से सहस्त्रों झरने और प्रपात प्रवाहित होते रहते है। इस स्थान को विन्ध्य क्षेत्र कहते है। पौराणिक कथाओं में विन्ध्यक्षेत्र को अगस्त, अंगिरा, विश्वामित्र आदि ्षियों की तपोभूमि बताया गया है। बुन्देलखण्ड को जिस प्रकार तपोभूमि की मान्यता प्राप्त है उसी प्रकार वीर भूमि, कवि भूमि और प्राकृतिक छटा से सज्जित सौजन्य भूमि की सहज ख्याति मिली है। इस छंद में बुन्देलखण्ड के सर्वतोमुखी वैभव का दर्शन कराना चाहिये। ''विन्ध्यांचल अंचल क्षमा की क्षमता को लिये, विश्व को लिखा रहा है मानवी परंपरा मान्य मान्यता का विभुता का वर वीरता का, पड़ा रहा पाठ, छत्रसाल रण बांकुरा। सुर–बन, लब्जित हो करता सराहना है, कानन यहॅा का देख रेख के हरा–भरा। बेतवा, धसान, सिन्ध, केन करती कलोल, बन्दौ 'मित्र' बिमल बुन्देल की वसुंधरा।

बुन्देलखण्ड का प्राचीनतम नाम चेदि था। बाद में उसकी एक संज्ञा जेजाक भुक्ति हुई। महाजनपद–युग में चेदि की गणना भारत के सोलह बडे राज्यों में की जाती थी। पौराणिक बौद्ध एवं जैन साहित्य से यह ज्ञात होता है कि चेदि जनपद की राजधानी का नाम ''शुक्तिभतीपुर'' था। यह नगर

शुक्तिमनी नदी के तट पर स्थित था। अब यह नदी केन कहलाती ह। आगे चलकर चेदि का परवर्ती नाम बुन्देलखण्ड प्रसिद्ध हुआ।

बुन्देलखण्ड एक भौगोलिक अभिधान है जिससे बुन्देल नामक क्षेत्र का द्योतन होता है। भारत के इस प्राचीन भू–भाग ने यह नाम उस समय पाया जब चौदहवीं सतहवीं शताब्दी ई. में बुन्देल राजपूतों ने अपनी चरम शौर्य शक्ति के कारण अपनी पृथक पहचान बनायी और उनके द्वारा शासित क्षेत्र बुन्देलखण्ड कहलाया। इसके पूर्व यह क्षेत्र चेदि–जेजाकशुक्ति, जुझौति, विन्ध्येलखण्ड एवं विन्ध्यप्रदेश आदि विविध नामों से विभिन्न कालों में अपनी प्रभुसत्ता संजोए रहा।

(द) भाषायी पृष्ठभूमि :–

मध्यभारत के विन्ध्यांटबी क्षेत्र विन्छोल खण्ड अथवा बुन्देलखण्ड प्राचीनतम क्षेत्रों में है। जिसमें झॉसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर, महोबा, बांदा, चित्रकूटधाम (साहू जी महाराज नगर,), टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना का एक भाग, सागर, दमोह, छतरपुर, दतिया, भिण्ड, ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी, विदिशा और जबलपुर के अतिरिक्त गुना, सिवनी, तथा छिंदवाड़ा, बालाघाट, और बैतूल का विशाल भूभाग आता है जिसमें लगभग 2 करोड़ लोग निवास करते है। और इन्हें क्षेत्र के नामानुरूप विन्हयेलखण्डी या बुन्देलखण्डी कहते है। बुन्देलखण्डी का रूपान्तरण बाद में बुन्देला हुआ जिनकी भाषा बुन्देली मानी गई।

बुन्देली भाषा भी इस भूखण्ड के प्राचीन स्वरूप के पुरातन भाषाओं में एक है। बुन्देली का उद्भव प्राकृत और प्राकृत अपभ्रंश से हुआ। ''संस्कृतात् प्राकृत श्रेष्ठ और ज्येष्ठा'' इसे प्राचीन भाषा की मान्यता प्रदान करते है। बुन्देली भाषा की यह धारणा 10वीं सदी में मिलने लगी थी किन्तु इसके आगे ऊबड़–खाबड़ क्षेत्रों में बहती जमुना, नर्मदा, चम्बल और टौंस के प्रवाह की भांति इसका विकास प्रारंभ में धीमा किन्तु बाद में तीव्र होता चला गया।

जगनिक को बुन्देली का आदि कवि और उसके द्वारा रचित 'रासो' बुन्देली भाषा का पथम ग्रंथ बना।

बुन्देली के भाषा के सम्बंध और विकास के कार्य, बुन्देलीवार्ता गुरसराय बुन्देली हिन्दी शोध संस्थान झॅासी , चन्दनदास शोध संस्थान बांदा, बुन्देली विकास परिषद स्यावरी, बुन्देली भारती पृथ्वीपुर (म.प्र.) बुन्देलखण्ड अकादमी छतरप‚र और सागर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.), की ईसुरी पीठ, बुन्देली शोध संस्थान सेंवड़ा (म.प्र.) आदि ने किया। भोपाल के अखिल भारतीय बुन्देलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद आदि संस्थानों का बुन्देली भाषा के विकास में बहुत योगदान है।

''पांचकोस पै बदले पानी। बीस कोस में बानी।''

की उक्ति के बावजूद साहित्य साधकों ने अथक परिश्रम कर बुन्देली की समृद्धि में अपना 'होम' दान किया। इतने विस्तृत क्षेत्र और बदलती परिस्थितियों में जहां बुन्देली के विभिन्न रूप जैसे शिष्ट हवेली, खटोला, बनफरी, लुधयांती, चौरासी, ग्वालियरी, भदवरी, तंवरी, सिकखारो, पबांरी, जबलपुरी और डॅगाई की पहिचान रहते हुए परिनिष्ट बुन्देली में अगाध साहित्य की रचना की इसे भाषा का स्थान दिलाया।

इसके पूर्व संतकवि तुलसीदास की कवितावली में बुन्देली भाषा का दृगदर्शन होता है। इसमें बुन्देली शब्दों, बारे, बुढे, कथरी, रूख आदि और क्रियायें तथा उबारना और छोरना मुहावरों का समावेश हुआ है इस प्रकार 9वीं सदी के शैशव से लेकर बुन्देली राजमहलों से निकल कर जनपथ पर आ खडी हुई।

भारत की अधिकांश आर्य भाषाओं तथा उनकी बोलियों के नाम उनके क्षेत्र पर आधारित है यथा पंजाब की पंजाबी, राजस्थान की राजस्थानी, गुजरात की गुजराती, बंगाल की बंगाली, आसाम की आसामी, उड़ीसा की उड़िया, बिहार की बिहारी। इसी प्रकार अवध की अवधी, ब्रज की ब्रज,

कन्नौज की कन्नौजी, बघेलखण्ड की बघेली, मालवा की मालवी निमाड़ की निमाड़ी इसी आधार पर बुन्देलखण्ड की लाकभाषा बुन्देलखण्डी अथवा बुनदेली कहलाती है।

डॉ. उदयनारायण तिवारी के अनुसार :– ''बुन्देली अथवा बुन्देलखण्डी वस्तुतः बुन्देलखण्ड की भाषा है। बुन्देल राजपूतों की प्रधानता के कारण ही इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड तथा इस भाषा का नाम बुन्देली पड़ा।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी :– के अभिमत से ''बुन्देले राजपूतों के कारण मध्यप्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की सीमा के झाँसी, छतरपुर, सागर आदि तथा आसपास के भागों को बुन्देलखण्ड कहते है। वहीं की बोली बुन्देली या बुन्देलखण्डी है।''

''बुन्देली'' पश्चिमी हिन्दी की एक महत्वपूर्ण बोली है। बुन्देली लोकभाषा बुन्देलखण्ड में बोली जाती है किन्तु यह संपूर्ण बुन्देलखण्ड में प्रचलित नहीं है। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार एक तो यह बॉदा जिले की बोली नहीं है। दूसरे चम्बल नहीं ग्वालियर राज्य की उत्तरी और पश्चिमी सीमा का निर्माण करती है। किन्तु बुन्देली उत्तर में चम्बल तक ही सीमित नहीं है। यह इस नदी की पार कर आगरा मैनपुरी और इटावा जिले की दक्षिणी भाग में भी बोली जाती है। पश्चिम में यह चम्बल तक भी बोली जाती है।ग्वालियर राज्य के पशचिमी भाग में ब्रज और राजस्थान की कुछ बोलियों से मिश्रित बोली जाती है। इसी प्रकार दक्षिण में यह नर्मदा को पार कर होशंगाबाद और नरसिंहपुर जिले में ही नहीं वरन् सिवनी जिले में भी बोली जाती है। यह बालाघाट के लोधियों द्वारा भी बोली जाती ह। इस प्रकार यह 19 हजार वर्ग मीट में बसे लोगों द्वारा बोली जाने वाली लोकभाषा है।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार ''बुन्देली शुद्ध रूप में झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, (टीकमगढ़), सागर, नरसिंहपुर,

सिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है। इसके मिश्रित रूप दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट तथा नागपुर में प्रचलित है''।

डॉ. हरदेव बाहरी ने बुन्देली का क्षेत्र इस प्रकार वर्णित किया है

''यमुना उत्तर और नर्मदा दक्षिण अंचल।
पूर्व ओर है टोंस, पश्चिमी चल में चम्बल।।

किन्तु वर्तमान समय में यह क्षेत्र इससे कुछ अधिक बढ़ा, इसके अंर्तगत उत्तर प्रदेश में बॅादा का पश्चिमी भाग, उरई, हमीरपुर, जालौन और झांसी के पूरे पूरे जिले एवं मध्यप्रदेश में ग्वालियर का पूर्वी भाग, भोपाल का थोडा सा हिस्सा ओरछा, पन्ना, दतिया, सागर, टीकमगढ, नरसिंहपुर, सिवनी, छिंदवाडा, होशंगाबाद और बालाघाट के जिले आते है।''

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा – शुद्ध बुन्देली क्षेत्र के अन्तर्गत झॅासी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, सागर, नरसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबाद और मिश्रित बुन्देली का क्षेत्र दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट, तथा छिन्दवाडा का कुछ भाग मानते है।

डॉ. एम.पी. जायसबाल – ने शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र बुन्देली भाषी जिले टीकमगढ, सागर, झॅासी, जालौन जिले का अधिकांश भाग, हमीरपुर, ग्वालियर जिले के चन्देरी एवं मुंगावली क्षेत्र, भोपाल, सागर, भेलसा(विदिशा) जिले का आधा पश्चिमी भाग एवं दतिया की सीमा के भाग बतलाये है। उनके शेष बुन्देली भाषी जिले छतरपुर, पन्ना, दमोह, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, सिवनी, बालाघाट, छिंदवाडा, तथा दुर्ग के कुछ भाग है। इन्होंने बांदा जिले को भी बुन्देली भाषी क्षेत्र के अन्तर्गत स्थान दिया है।

डॉ. रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल – ने बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत आने वाले जिलों – जालौन, हमीरपुर, झॅासी, बॅादा, टोकमगढ, छतरपुर, पन्ना, दमोह, सागर, नरसिंहपुर, भिण्ड, दतिया, ग्वालियर, शिवपुरी, मुरैना, गुना, विदिशा, रायसेन, और होशंगाबाद को सम्मिलित करने के पश्चात उल्लेखित किया कि ''भाषायी

व्यापकता की दृष्टि से उक्त सीमा में कुछ परिवर्तन आवश्यक होंगे, जैसे नर्मदा के दक्षिण में स्थित छिंदवाड़ा, सिवनी तथा बैतूल जिले मराठी मिश्रित होते हुये भी बुन्देली भाषा भाषी ही है।

झॅासी, जालौन, हमीरपुर, और बॅादा को बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत माना गया है। उनमें से बॅादा जिला बुन्देली भाषी नहीं है। वहॅा अवधी का एक रूप बोला जाता है। चम्बल नदी ग्वालियर की उत्तरी और पश्चिमी सीमा पर बहती है जिसके साथ बुन्देलखण्ड की सीमा समाप्त हो जाती है किन्तु बुन्देली इस सीमा को बांधकर, आगरा, मैनपुरी और इटावा जिले के दक्षिणी भागों में बोली जाती है।

बुन्देली निम्नलिखित जिलों के लगभग एक करोड़ लोगों की मातृभाषा है।

उत्तर प्रदेश के पांच जिले – झॅासी, ललितपुर, हमीरपुर, जालौन तथा बॅादा।

मध्यप्रदेश के बाइस जिले – टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना, सागर, दमोह, दतिया, ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना, गुना, शिवपुरी, विदिशा, रायसेन, होशंगाबाद, जबलपुर, नरसिंहपुर, मण्डला, शिवनी, छिंदवाडा, बालाधाट तथा बैतूल, सतना की नागौद तहसील तथा सीहोर का पूर्वी भाग इनमें से सीमान्त जिलों का भाषा पर उनसे लगने वाले क्षेत्रों की भाषा का प्रभाव है। किन्तु भषा वर्षो के निर्णायक तत्वों ध्वनि, अर्थ, वाक्य रचना, शब्द समूह तथा रूप के आधार पर उपर्युक्त सभी जिलों की भाषा बुन्देली ही है।

राजनैतिक एक सूत्रता के अभाव के कारण बुन्देली के बहुत से क्षेत्रों के लोग स्वयं यह स्वीकार नहीं करते कि उनकी मात्रभाषा को स्थानीय नाम भी दे रखे है। उदाहरणार्थ–भिण्ड, मुरैना के लोगों ने तवरधारी तथा भदवरी, बॅादा और हमीरपुर जिलों के कुछ अंचलोंके लोगों ने बनाफरी, ग्वालियर, शिवपुरी और गुना की भाषा चौरासी कहलाने लगी। ग्रियर्सन महोदय ने भी बुन्देली क्षेत्र में बसने वाली जातियों अथवा स्थ ानों के नाम पर बुन्देली की

निम्नलिखित उपबोलियों या क्षेत्रीय रूपों की चर्चा की है जैसे– लुधांती, पॅवारी, खटोला, बनाफरी, कुन्द्री, निभट्टा, भदौरी तथा बुन्देली क्षेत्र के दक्षिण की मिश्रित बोलियां लोधी, कोष्ठी, कुम्भारी आदि किन्तु बुन्देली नाम भी उन्हीं को दिया हुआ है।

(4) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा से स्पष्ट रूप से संबंधित ग्राम, समुदाय, समूह, परिवार एवं व्यक्ति का नाम एवं सम्पर्क संलग्न है।

1. ग्राम धनगुवां,
2. ग्राम नाहरमऊ,
3. बांकोरी
4. बिलैहरी
5. घाना
6. पिपरिया
7. बड़तूमा
8. ललितपुर
9. कनेरादेव
10. मालथौन
11. बमनी
12. रजाखेड़ी
13. सागर

(5) योजना के सांस्कृतिक/परम्परा के तथ्यों की जीवंतता का विस्तारित भौगोलिक क्षेत्र (ग्राम, प्रदेश, राज्य, देश, महादेश आदि) जिसमें उसका अस्तित्व है, पहचान है।

lSjk %&

बुन्देली लोकनृत्यों की एक लंबी और समृद्ध परम्परा है। नृत्यों की परम्परा प्रागैतिहासिक काल से शुरू होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति के नर्तन से ही मानव जोवन में नृत्य के भाव जाग्रत हुये होंगे। लोक–जीवन तो बहु–आयामी होता है और लोक संस्कृति समूह की संस्कृति है तथा

लोकनृत्य भी समूह में ही किये जाते हैं। खुशी में नाचना मनुष्य का बुनियादी स्वभाव है।

मध्यप्रदेश की हृदय स्थली बुन्देलखण्ड शौर्य–साहस तथा श्रंगार के लिए प्रसिद्ध है। यहां कालान्तर में अनेकानेक संस्कृतियों की आवाजाही रही है। अतएव यहां की संस्कृति में अनेक तत्व समाहित हैं। यहां के वीर तथा रणवांकुरे योद्धा बुन्देला कहलाये तथा बोली बुन्देली। बुन्देली विविधवर्णी संस्कृति में पुलिंद, निषाद, शबर, रामठ, दांगी आदि संस्कृतियां, इसके अलावा महाभारतकालीन वन्य संस्कृति आदि मिलकर एक अलग लोक संस्कृति बनी और लोककलायें अपनी विशिष्ट धारा में प्रवाहित होने लगीं। यहां का लोक संगीत अन्य लोकांचलों की तुलना में अधिक आकर्षक तथा गतिशील है और लोक नृत्य अद्‌भुत तथा अलौकिक रूप लिये हैं। अनेक लोक धुनें, अनेक लोक वाद्य यहां प्रयुक्त होते हैं। बुन्देलखण्ड के समूह नृत्य तथा समूहगान सह–अस्तित्व की भावना के प्रतीक हैं। नृत्य का प्रारम्भ मनुष्य ने पशु–पक्षियों के नर्तन का अनुसरण करके किया होगा। इस अंचल के अधिकांश नृत्य वृत्ताकार में किये जाते हैं।

हमारे वैदिक आख्यानों में नृत्य की उत्पत्ति शिव के ताण्डव से मानी जाती है। शिव ने ताण्डव किया, माता पार्वती ने 'लास्य' किया, श्रीकृष्ण ने महारास, शिव नटराज तथा कृष्ण नटनागर कहलाये। कालांतर में लोक ने नृत्य का अनुसरण किया, अतः लोक में किये जाने वाले नृत्य लोकनृत्य कहलाये। जाति विशेष ने जिन नृत्यों को अपना लिया वे जातिगत नृत्य की परिधि में आने लगे। त्यौहार तथा अनुष्ठान से जुड़े नृत्य सांस्कृतिक इतिहास की व्याख्या करते हैं।

'सैरा' बुन्देलखण्ड का पुरूष प्रधान सामूहिक लोकनृत्य है। पूरे भारत में डंडों से किये जाने वाले लोकनृत्य प्रचलित हैं जैसे – गुजरात का गरवा, डांडिया, हल्लीसक नृत्य, पाई डंडा, राजस्थान का गेह आदि। बुन्देलखण्ड का सैरा नृत्य भी इसी श्रेणी में आता है। यह नृत्य जाति विशेष का नहीं है।

जाति बंधन तथा आयु बंधन से परे है। त्यौहारो नृत्य सैरा की एक विशेषता यह है कि इसमें नर्तक नृत्य तथा गायन साथ–साथ करते हैं। बुन्देलखण्ड के नृत्यों में सबसे तीव्र गति का यह नृत्य है।

'सैरा' की शुरुआत कहां से हुई, इस संबंध में कोई एकमत नहीं है। लोक कवि जगनिक के 'आल्हाखण्ड' के पूर्व सैरे का कोई उल्लेख नहीं मिलता। आल्हाखण्ड में कजलियों की लड़ाई का वर्णन है जो आल्हा–ऊदल तथा पृथ्वीराज के बीच हुई थी। कजलियों के समय ही सैरा नृत्य किया जाता है एवं इस नृत्य का प्रारंभ कजली से ही माना जाना चाहिये।

चंदेलवंश के महाराज परमाल की बेटी चंद्रावली अपनी कजलियों का त्यौहार 'कीरत सागर' में मनाना चाहती थी। उस समय किसी बात को लेकर चन्देलराज ने अपने वीर जांबाज योद्धा आल्हा–ऊदल तथा मलखान को अपने राज्य से निष्कासित कर दिया था। इधर बेटी की जिद उधर चारों ओर बसे दुश्मनों का अंदेशा ऐसे समय में क्या किया जाये? दिल्लीपति पृथ्वीराज ने महोबे पर चढ़ाई कर दी थी। ये सारी बातें चन्देल महारानी मल्हना को चिन्ता में डाल रही थी। बहुत चिंतन करने के उपरांत महारानी ने अपने तोते के द्वारा आल्हा–ऊदल को एक संदेश भेजा, जिसमें यहां की सारी स्थिति का विवरण था। उन्होंने चन्द्रावली को बहुत समझाया लेकिन उसकी जिद के आगे उन्हें विवश होना पड़ा। बुन्देलखण्ड के राछरा गीतों में उसका विवरण कुछ इस प्रकार से है :–

आसों के सहुना घर के करो, आगे के देहों कराय।
सोने की नादें दूधों भरीं, सो भुजरियां लेव सिराय।।

कै जैहें तला की पार भैया रे, कै जैहें भुजरियां सूक।
धरी भुजरियां मानक चौक में, वीरा रहे तुलाय।।

कैसी बहिन हटें परी, बरबस लेत पिरान।
आसों के सहुना जूझ के हैं, आंगे के दैहों कराय।।

चंद्रावली की हठ के आगे किसी की नहीं चली ...... अंत में ब्रह्मानन्द के साथ महोबा की फौजें सजाकर नौसो डोलों में चन्द्रवली को कीरत सागर ले जाया गया। डोलों के साथ अंगरक्षक तथा शाही फौज चल रही थी। कीरत सागर पहुंचने पर दुश्मन ने धावा बोल दिया। इधर आल्हा–ऊदल को जैसे महारानी का संदेश मिला उसी समय वे गेरूवा वस्त्रधारी साधुओं के वेष में कीरत सागर पहुंचे और दुश्मन को खदेड़ दिया। चन्द्रवली ने अपनी चौथ खुशी–खुशी मनाई। तब से कजलियों का त्यौहार मनाया जाने लगा और इसी दिन से सैरा नृत्य प्रचलित हुआ।

बुन्देलखण्ड के लगभग हरेक गांव में सावन मास की नवमीं को माहुल के पत्तों के दोनों में गेहूं वो दिये जाते हैं, रोज सींचे जाते हैं। इन्हें ढ़ककर रखा जाता है जिससे वे पीले रंग के दिखते हैं। ये भुजरियां भाद्र कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को किसी जलाशय पर जाकर खोंटी तथा सिरायीं जाती हैं। इन्हें स्त्रियां ही सिराने जातीं हैं। भुजरियें एक–दूसरे को देकर शुभकामनायें प्रदर्शित की जातीं हैं। भुजरियें देने से पूर्व में रहे बैर–भाव खत्म हो जाते हैं। जिस दिन भुजरियें सिरायी जाती हैं उस दिन पुरुष वर्ग सैरा नृत्य करते हैं तथा महिलायें राछरे गीत गातीं हैं। सैरा नृत्य कजली के दिन से पूरे मास तक चलता है। किसान खेतों में बुवाई करके इस समय फुरसत पा लेते हैं।

सावन–भादों में खेतों में लहलहाती फसल को देख बुन्देलखण्ड का ग्रामीण मेघों से सिंचित हरी–भरी धरती के आंगन में सैरा नृत्य करते हैं :–

साहुन मईना नीको लगै, गेंवड़े भई हरयाल।
साहुन भुजरियां वै दई, भादों में दई हैं सिराय।।

गीत–नृत्य के बिना पर्व–उत्सव की कल्पना अधूरी होती है। इस मौसम में लताओं और वृक्षों की धूल उतर जाती है, हरीतिमा निखर आती है। सूखी तलैयां भरने लगतीं हैं, जले हुये उपवन हरियाली से लदने लगते हैं, इसी समय हिन्दू त्यौहारों का तांता लगने लगता है और सुहावने मौसम में

सैरे की गूंज उठने लगती है। सैरा वीर एवं श्रृंगार रस से मिश्रित है लेकिन इसकी लय को सुन ऐसे महसूस होता है जैसे कि युद्ध का आवहान किया जा रहा है। सारा वातावरण वीररसमय हो जाता है :–

सदा तो तुरैया अरे फूले नहीं हो, सदा ने साहुन होंय।
सदा ने क्षत्री अरे रण खों चढ़ें, कऊ सदा ने जीवे कोय।।

सैरा नर्तकों की टोली अपने दोनों हाथों में दो छोटे–छोटे लकड़ी के कलात्मक गोलाकार डंडे लिए होते हैं, गायन और नृत्य साथ–सथ शुरू होता है। हर नर्तक अपने दायें–बायें दोनों ओर बढ़ने वाले डंडों पर अपने डंडे मारता हुआ गोलाकार में नृत्य तथा गायन करता आगे बढ़ता जाता है। नृत्य के समय कभी वे जमीन पर बैठते, झुकते, निहुरते तथा लेटकर नृत्य करते हैं परन्तु सभी स्थितियों में उनके डंडौं की चोट एक साथ ताल पर पड़ती है यह डंडों की ध्वनि ताल का काम करती है। सैरा नृत्य में प्रयुक्त होने वाले वाद्यों में मिरदंग, टिमकी, ढ़ोलक, मंजीरा, झींका, बांसुरी, अलगोजा आदि हैं।

नृत्य के तीन चरण होते हैं उनके अनुसार गायन, वादन तथा नर्तन होता है। पहले चरण में करखा गायन जिसे सैरा तथा साखी भी कहते हैं, विलम्बित लय में शुरू होता है उस समय नर्तक गोले में आगे बढ़ते हैं, नृत्य की मुद्रायें भी आगे बढ़ने की होती हैं। दूसरे क्रम में पाई गायन होता है, संगीत की मध्यम लय तथा नृत्य भी उसी के अनुरूप बढ़ता है, नृत्य का कलात्मक रूप पाई में दिखता है। इसी समय कई मुद्रायें बदलती जाती हैं। तीसरा और अंतिम चरण पड़गर गायन से शुरू होता है जिसमें लय तीव्र से तीव्रतर होती जाती है और इस समय गायन नर्तन तथा वादन में होड़ सी लगती है। इस होड़ में कौन कम रहा, कौन पीछे दर्शक तो यह निर्णय ही नहीं कर पाते। नृत्य को भंगिमायें ताण्डवी रूप ले लेती हैं। सैरा गांव के चौपाल पर किया जाता है। यह लोक मंच खुला रहता है। इस समय लय तथा नृत्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे युद्ध का आवहान किया जा रहा हो।

समस्त वातावरण वीर–रसमय हो जाता है। तभी तो बुन्देलखण्ड में सैरा को आल्हा–ऊदल के अखाड़े की संज्ञा दी जाती है। पूरा नृत्य वृत्ताकार में होता है। साजिंदे बीच में होते हैं लेकिन जब नृत्य की लय बढ़ने लगती है तो साजिन्दे गोले से बाहर आ जाते हैं। सैरा नृत्य में शब्द एवं संगीत एक ही सांचे में ढ़ले लगते हैं। बहुरंगी पोषाकें धारण किये हुये पुरुष मंडल चक्राकार अपने पैरों को मृदंग के ताल पर थिरकाते हुये दोनों हाथों को चलाने का काम, गायन, नर्तन अर्थात उन्हें तीन काम एक साथ करने होते हैं। अपना पूरा ध्यान नृत्य पर ही रखना होता है वरन् कहीं डंडे में चूक न हो जाये अगर डंडा चूक गया तो सामने वाले को लग सकता है, इसलिए कहा जाता है :–

सैरा तो सैरा अरे सब कोऊ कहे हो, सैरों भलो नयीं होय।
डड़ला चूके अरे बैयां लगे, जेकी पीरा घनेरी होय।।

सैरा शारीरिक ऊर्जा का नृत्य है, नर्तक अपने शरीर की समस्त ऊर्जा नृत्य में लगा देते हैं, तब सैरा नृत्य के सारे कला शिखर खुल जाते हैं यही नृत्य की चरम परिणति और फलश्रुति भी होती है।

(6) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा की पहचान एवं उसकी परिभाषा, उसका विवरण –

1) मौखिक परम्परा एवं अभिव्यक्तियां

2) प्रदर्शनकारी कलाएं

3) सामाजिक रीति–रिवाज, प्रथाएं, चलन, परम्परा संस्कार एवं उत्सव आदि

4) प्रच्कृति एवं जीव जगत के बारे में ज्ञान एवं परिपाटी व अनुशीलन प्रथाएं

5) पारम्परिक शिल्प कारिता

6) अन्यान्य

(7) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा का रूचिपूर्ण सारगर्भित संक्षिप्त परिचय दें –

प्रस्तुत योजना समूचे बुन्देलखण्ड की महत्वपूर्ण सांस्कृतिक परम्परा रही है। वर्तमान में सैरा नृत्य लुप्त प्राय हैं। सैरा इस अंचल का त्यौहारी नृत्य है जो कि कजली के दिन पुरूष वर्ग द्वारा किया जाता है। नृत्य में गायन भी महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें वीर रस तथा श्रृंगार रस की मिली–जुली अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। इसके गीतों में हमारा गौरवशाली इतिहास धर्म, संस्कृति तथा लोकजीवन समाहित है। कोई भी सांस्कृतिक परम्परा समूह में होती है अर्थात् सब मिल–जुलकर इसमें भागीदारी करते हैं। इससे समाज में जुड़ाव के साथ ही आपसी भाईचारा बढ़ता है। कजलियां विसर्जित करके पहले देव स्थानों में चढ़ाई जातीं हैं तत्पश्चात् एक–दूसरे को दीं जाती हैं। इनसे पुराने बैर मिट जाते हैं। अर्थात् त्यौहारों में हमें ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की भावना परिलक्षित होती है। इसमें जाति, वर्गभेद, उम्र आदि का बंधन नहों होता। आपस में मिल–जुलकर त्यौहार मनाते हैं।

बुन्देलखण्ड में भुजरियां (कजरियां) श्रावण माह में बोई जाती हैं। इन्हें महिलाओं द्वारा अवसर विशेष पर शुभ मुहूर्त में मिट्टी लाकर उसे दोनों अथवा गुनुआं में रखा जाता है, फिर उसमें गेहूं बो दिये जाते हं और ढ़ककर रखा जाता है। नित प्रति पानी दिया जाता है, पूजन किया जाता है। दीपक अगरबत्ती जलाई जाती है, होंम लगाया जाता है। भादों में कजरियों का विसर्जन पूजन के पश्चात् महिलाओं द्वारा किया जाता है। कजरियों के बारे में लोक मान्यता है कि ये जितनी अधिक लम्बों तथा पीली होती हैं वर्ष की फसल उतनी अच्छी होती है। कजलियों को विसर्जन के समय खोंट लिया जाता है। उसे सबसे पहले देवी–देवताओं को चढ़ाया जाता है फिर बड़े–बुजुर्गों को दिया, लिया जाता है।

कजरियों को एक–दूसरे के देने के पीछे मान्यता है कि वर्ष भर को भूलचूक की क्षमा याचना, बैर भाव आदि को भुलाकर हिल–मिलकर अन्न को बची में (साक्षी) रखकर होता है। इस समय जिसके घर दुख का यह त्यौहार होता है, उसके यहां अवश्य जाया जाता है, बैठने के लिये। गांव के बड़े घरों में पूरा गांव कजरियां देने जाता है। बड़े–बुजुर्गों को जब छोटों द्वारा कजलियां दी जाती हैं तो बड़े–बुजुर्ग कजरियों को हाथ में लेकर फिर दो–चार खजरियां देने वाले के दोनों कानों पर खोंस दते हैं, छोटा उनके चरण छूता है और बड़े आशीर्वाद देते हैं। यह परम्परा गांव–खेरों में आज भी प्रचलित है।

भुजरियां बोने से विसर्जन तक के दिनों में किसी बड़े मैदान में पुरुषों द्वारा सैरा गायन किया जाता है। इस सैरे की विशेषता यह होती है कि इसमें वाद्य यंत्रों के रूप में डंडे, ढोलक और मंजीरा होते हैं। पुरुष जो ढोलक मंजीरा बजाते हैं, वे बीच में होते हैं और उसके चारों ओर गोल घेरा बनाकर डंडे लिये लोग घूमते–गाते और एक–दूसरे के डंडे पर डंडे की चोट करते चलते हैं। सैरा गाते समय ये एक–दूसरे के डंडे से डंडे को मारते आड़े–तिरछे होते बैठते, आगे–पीछे हो, उछलते तथा कलाबाजियां दिखाते घूमते हैं। सैरा की शुरूआत 'आरे–आरे हां रे' से होती है और 'हुक्क हुइया हा हा' सैरा गीत के अंत में लगाकर लोग डंडों के स्वर ढोलक मंजीरे के साथ मिलाते घूमते रहते हैं।

ग्रामीण अंचलों में बसा हुआ समाज आज भी अधिकांश अनपढ़ ही है, परन्तु उसमें आज भी अपने देश आर धरती से गहरा लगाव है उसके प्रति आदर भाव है। कृषि के लिए उसके मन में श्रद्धा और स्नेह के साथ–साथ सम्मान का भाव है। उत्तम खेती ही ग्राम्य जीवन की जीविका है, अतएव उसके प्रति लगाव होना स्वाभाविक भी है। डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी लिखते हैं – बुन्देलखण्ड भारत का एक विशिष्ट भू–भाग है, जहां की अपनी विशिष्ट संस्कृति है, उल्लेखनीय गरिमा है, स्मरणीय इतिहास है, दर्शनीय प्राकृतिक

सुषमा है, सराहनीय शौर्य है, प्रसंसनीय मर्दानगी है और है विलोभनीय नारी सौन्दर्य।

इस भू–भाग में एक साथ लोक और शिष्ट संस्कृति आज भी सुरभित है। डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही' के अनुसार मनुष्य सदा सुख की खोज में रहता है। वह कष्ट साध्य श्रम को गीत गाकर भुलाना चाहता है, इस संबंध में एक अंग्रेजी कवि ने कहा है 'आनंद जीवन की औषधि है। वह कष्टों का उपचार करता है। संघर्ष को परे रखता है, चिंता की रेखाओं को मिटाता है और कई गुना सुख प्रदान करता है।' ऐसी ही भावधारा में हमें सैरा लोकगीत में देखने–सुनने को मिलती है। सैरे के बारे में श्री गौरीशंकर द्विवेदी और विश्वसहाय चतुर्वेदी कहते हैं कि ये आषाढ़ मास से लेकर श्रावण माह तक गाये जाते हैं। व्योहार राजेन्द्र सिंह ने सैरे सामयिक गीतों के अंतर्गत लिये हैं। श्रीचंद जैन सैरे को नृत्य–गीत के अंतर्गत मानते हैं। डॉ. विनोद तिवारी ने सैरों को खेत की कविता कहते हुए उसे विषयगत् या अवसरगत् वर्गीकरण करते हुए वर्णन के अन्तर्गत लिया है। मेरी दृष्टि में सैरा लोकगीत श्रावण माह में जब से कजलियां रखीं जाती हैं, तब से लेकर भादों में जिस दिन उनका विसर्जन होता है, उस दिन तक ही गाया जाने वाला लोकगीत है।

आल्हा में भुजरियों की लड़ाई के अन्तर्गत बुन्देलखण्ड की आन–बान और शान का चित्रण हुआ है। इस अवसर पर गाये जाने वाले सैरा लोकगीत में जहां बुन्देली शौर्य गाथा गाथा की बानकी मिलती है वहीं प्राकृतिक सुषमा, बुन्देली जमीन की पहचान उसमें पैदा होने वाली फसलों की जानकारी मिलती है। नारी मन के कोमल भाव और उसकी टीस, कसक भी यत्र–तत्र बिखरी दिखाई पड़ती है। लोक का उत्सव और प्राकृतिक छटा का चित्रण बुन्देली सैरा की खासियत है। इतिहास बोध, भौगोलिक झलक, रहन–सहन, खान–पान, जीवन–दर्शन की विभिन्न अभिव्यक्तियां सैरा लोकगीत में खोजी जा सकती हैं। ऐसे लोकगीतों का संग्रह कर उस पर नये सिरे से शोध करने में सहायता मिलती है।

बुन्देली धरती प्रकृति सुरम्य स्थली है। यहां पर पावस ऋतु मनोहारी छटा बिखेरती है। अतः इस ऋतु में गाये जाने वाले लोकगीतों में सैरा अपनी विशिष्टता रखता है। वैसे सैरा लोकगीत नृत्य प्रधान और पुरुष वर्ग का लोकगीत है। इसमें पुरुष की भागीदारी रहती है। गीतां के अन्तर्गत अवश्य ही नारी भावनाएं उजागर होती हैं, जो पुरुष अपने कंठ से उजागर करता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से पावस ऋतु का प्रभाव हर मानव के जीवन पर अपनी अमिट छाप छोड़ता है जो सैरा के माध्यम से लोक में परिस्थितियों के साथ संयोग–वियोग के स्वाभाविक चित्रण में रूपान्तरित मिलता है।

संयोग श्रृंगार तथा मादकता जहां बुन्देली सैरा में अपनी छटा बिखेरते हुए मिलती है, वहीं पावस ऋतु की टीस, संत्रास और वियोगी हृदय की कसक अधिक गहरे आघात करती झलकती है। सैरा लोकगीत में रसमयता, कलात्मकता, वातावरण की जीवन्त दृष्टि तथा सामाजिक संस्कृति सभी कुछ समाहित है। बुन्देलखण्ड का अतीत और ऐतिहासिक गौरव गाथा सैरा में सुरक्षित है। इसमें बुन्देली परम्परा एवं रीति–रिवाजों के साथ करूणा का भाव तथा मार्मिकता अधिक परिलक्षित होती है। कुल मिलाकर सैरा लोकगीत में सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन के जीवन्त चित्र स्पष्ट दिखते हैं जो लोक संस्कृति के मूल तत्वों के रक्षक कहे जाते हैं। पारिवारिक परिस्थितियों के जीते–जागते ये सैरे जहां आनंद का संचार हमारे भीतर करते हैं, वहीं ये जीवन जीने की प्रेरणा भी देते हैं। संघर्ष के क्षणों में कर्मठता प्रदान करते हैं। जूझने की शक्ति का संचार करते हैं और क्रियाशील बने रहने की जुगुप्षा जगाते हैं। सैरा में जीवनदायनी शक्ति है। नारी मन की कोमलांगी भावना है। पौरूषेय ओज है। बुन्देली लोक की रसिकता है। कुल मिलाकर प्रेम की उत्कंठा और वीरता की पराकाष्ठा का समन्वय सैरा लोकगीत में समाया हुआ है।

उदाहरण स्वरूप कुछ सैरे प्रस्तुत हैं। गोल घेरे में जब एक ओर से स्वर उठता है कि –

आरे आरे हां इतनी बेरा किये गाइये,
रे माता लइये कौन के नांव
अरे कौना फुलवा चढ़ाइए हो,
कीके दरसन की आस ....
हुक्क हुइया हा हा।

गीत के प्रारंभ होते ही धीरे–धीरे घेरे में घूमते लोग एक दूसरे के डंडे पर चोट लगाते हुए चलते हैं और गीत समूह स्वरों में होता है, उभरता है। गति तेज होत है, स्वर देने के लिए लोग दो भागों में बंट जाते हैं फिर आधे लोगों के बीच से एक व्यक्ति गा उठता है।

आरे आरे हां सदा तौ भुमानी दाहनी रे,
सनमुख रहत गनेस,
पांच देव रच्छा करें,
रे बिरमा बिस्नु महेश ....
हुक्क हुइया हा हा।

भुजरियों के समय में जो चित्र आल्हा गायकी से उभरते हैं वैसी ही स्थिति सैरा भी पैदा करता है। शौर्य और बुन्देली ओज से सराबोर सैरा अपनी विशिष्टता को उजाकर करता है, यथा –

आरे आरे हां सदा तुरैया अरे फूलै नहिं हो,
सदा नें साउन होय,
सदा नें राजा अरे रन जूझै,
सदा नें जीबे कोय ....
हुक्क हुइया हा हा।

हमेशा तुरैया नहीं फूलती और न ही हमेशा श्रावण बना रहता है। हमेशा ही राजा रण में जूझता नहीं रहता और न ही हमेशा कोई जीता रहता है।

आरे आरे हां नायें सें आ गई रे अरे नदी बेतवा,
मायें से केन धसान
इन दोइ के अरे भैया बीच में,

झंडा रोपै मरद मलखान ......

हुक्क हुइया हा हा।

इस तरफ से तो नदी बेतवा और उस तरफ से केन और धसान नदी में बाढ़ आ गई है और इन दोनों के बीच में ही मर्द मलखान ने अपना झण्डा गाड़ दिया है।

आरे आरे हां मर्ची गुहांरी, अरे कनवज कीं,

कऊं हिरना सब खब जांय,

चीनों चीनों अरे सकियां हरौ हो,

असवार कहां से आंय .....

हुक्क हुइया हा हा।

कनबज की गुहांरो (खेत) मचे हुए हैं जिसमें हिरण गब (धंस) गब (धंसा) जाते हैं। अरी सहेलियों! इन्हें तो पहचानों भला ये असवार कहां के हैं?

आरे आरे हां हतियां पै के महाउती रे,

रोकौ रूपैया लेव

धरियक हांती ठांड़ौ करौ हम,

आल्हा खों देखन जायें ......

हुक्क हुइया हा हा।

अरे! हाथी के ऊपर बैठे महावती जरा हाथी को रोक रुपया ले लो। जरा थोड़ी देर के लिए हाथी को खड़ा करो, हम आल्हा को देखने जाते हैं।

आरे आरे हां हरे तौ बछेरा अरे परमाल के हां,

हारी सुआ बारी पूंद

हरी करोंदन अरे झक झालरी

दोइ दल में करत किलोर ....

हुक्क हुइया हा हा

परमाल के तो बछेड़ा जो हैं वे हरे रंग के हैं। उसकी पूंछ सुआपंखी है। हरी करौंदी की डांग में दोनों दलों के बीच वह किलोल कर रहा है।

आरे आरे हां दौरत आवै अरे नदी बेतवा हो,

डूबत आवै कछार,
अरे आदि तौ नदिया पानी बहै हो,
आदी रक्त की धार .....
हुक्क हुइया हा हा।

नदी बेतवा तो दौड़ती आ रही है, जिसके कारण उसके कछार डूबते जा रहे हैं। आधी नदी में तो पानी बह रहा है और आधी में खून की धार बह रही है।

आरे आरे हां खेतों लटकै अरे लट कांकुन हो,
बंदियन में लटक रई धान,
लाखन लटकें अरे घुड़लन पै,
जाकी सोभा न बरनी जाय .....
हुक हुइया हा हा

खेतों में लट कांकुन झूम रही है और बंदवास में (भरे खेतों में) धान लटकने लगी है। घोड़ों के ऊपर तो देखो लाखन झूमते दिख रहे हैं, जिसकी शोभा कही नहीं जाती।

आरे आरे हां रोमन रोमन अरे गांसी लगी हो,
बरमा असी सैल कौ घाव
मामा बिसवासी अरे आओ नें,
चौंड़ा जैतखम्भ लयें जाय ....
हुक्क हुइया हा हा

रोम–रोम में भिदे हुए हैं। ब्रह्मा को हजारों घाव हो गये हैं परन्तु मामा जिसका विश्वास था वह अभी तक नहीं आ पाया है। उस चौड़ा को देखो वह जैतखम्भ ही लिये जा रहा है।

आरे आरे हो ऊदल मारे हो, ऊदल मारे भली करी हो,
बड़ाई तौ भारी होय
लाखन राजा अरे, निज मारिऔ,
परदेसी पावनें आयें .....
हुक्क हुइया हा हा

ऊदल को मारा अच्छा किया इससे बहुत तारीफ हो रही है परन्तु लाखन राजा को नहीं मारना, वे परदेशी पाहुने हैं।

आरे आरे हां कहां,
धरी है करहा कटरियाएं हो,
कहां गेंड़ा की ढाल
कौनन टंगी है करहा कटरिया हो,
घुल्लन टंगी है ढाल ......
हुक्क हुइया हा हा।

कहां पर करहा कटार रखी हुई है और कहां पर गेंड़ा की ढाल रखी है? कोने में करहा कटरिया है और घुल्ले के ऊपर गेंड़ा की ढाल टंगी हुई है।

आरे आरे हां कहां धरो सुरसी कौ बागौ,
कहां निरमोला पाग
जमखाने में सुरसी कौ बागौ हो,
उतई धरी है पाग ......
हुक्क हुइया हा हा।

कहां पर सुरसी वाला बागा रखा हुआ है और कहां पर निर्मल पगड़ी रखी हुई है? जमखाने में सुरसी का बागा रखा हुआ है और वहीं पर पगड़ी रखी है।

आरे आरे हां अन्न में नोंनी, अरे जुनरी लगै हां,
धन में धौरी गाय,
सकियन नोंनीं अरे सगुना लगे,
मरदन में मरद मलखान .....
हुक्क हुइया हा हा।

अनाज में ज्वार अच्छी लगती है और धन–धान्य में धवल गाय अच्छी होती है। सहेलियों के बीच में सगुना शोभा देती है और मर्दों के बीच में मलखान मर्द लगते हैं।

आरे आरे हां अन्न में नोंनी जुनरी लगै हो,

गौअन में तो धोरी गाय,
रानिन में नोंनी फुलवा लगे हां,
कुंअरन में उदैसिंग राय ......
हुक्क हुइया हा हा

अनाजों में तो ज्वार अच्छी होती है। जैसे गायों के बीच में सफेद गाय। रानियों में तो फलवा रानी अच्छी लगती हैं और कुंअरों में उदयसिंह राय अच्छे हैं।

आरे आरे हां आसों के साउन, जूझ के हां
आगे के दैऔं कराय,
नउनियां बुलाऔ री बखरी में हो,
बुलौआ दऔ फिराय ......
हुक्क हुइया हा हा।

इस वर्ष के श्रावण में युद्ध करके फिर तुम्हें आगे के दर्शन कराऊंगा। अभी तो खवासन को बुलाकर बुलौआ देने के लिए बुलाओ कि वह घर–घर जाकर निमंत्रण दे आये।

इसी तरह से रामाऔतारी सैरा में जहां रावण लंका के भीतर गरजता है वहीं भगवान श्रीराम अवधपुरी में और इन दोनों के बीच में देखो तो श्री हनुमान जी गरज रहे हैं।

आरे आरे हां लंका गरजै अरे रावना हां,
अवधपुरी भगवान
इन दोउन के अरे भैया बीच में,
गरज रहे हनुमान .....
हुक्क हुइया हा हा

इसी तरह से भुजरियों को लेकर एक चित्र सैरे को सजीवता प्रदान करता है–

आरे आरे हां लंका साउन महीना अरे नीको लगे हो,

गेंवड़े भई हरयार

साउन में भुजरिया बे दियौ हां,

भादों में दिऔ सिराय ....

हुक्क हुइया हा हा।

श्रावण का महीना अच्छा लगता है, गांव के बाहर हरियाली हो जाती है। श्रावण में भुजरिया बो देना और भादों के महीने में विसर्जित कर देना।

आरे आरे हां ऐसौ है कोउ धरमी रे,

बैनन खों लिऔ है बुलाय,

आसों के साउना घर के करौ हो,

आंगे के देहैं कराय (मिलाय) ....

हुक्क हुइया हा हा।

ऐसा कोई धरमी है जो बहनों को बुला लाये। इस वर्ष का श्रावण घर में ही करें और आगे के श्रावण में फिर मिल लेंगे।

आरे आरे हां धरीं भुजरियां मानक चौक में
बीरा रये कुमलाय
कैसी बहन हेटें परी हां,
बरबस लेत पिरान .....
हुक्क हुइया हा हा।

मानिक चौक के बीच भुजरिया रखी हुई हैं और पान के बीड़ा कुम्हला रहे हैं। बहिन किस प्रकार से अपनी अड़ी पकड़े हुए है, बरबस ही प्राण लेने पर तुली हुई है।

आरे आरे हां सोनें की मांद अरे दूद भरीं हो,

सोने भुजरियां लेऔ सिराय,
कै जैहें तला की पार पै हां,
कै जैहें भुजरिया सूक .....
हुक्क हुइया हा हा।

सोने की नाद तो दूध से भरी हुई है। सो तुम अपनी भुजरिया विसर्जित कर लो। अरे! भुजरिया तो तला की पार के ऊपर जायेंगी वर्ना ये रखी–रखी सूख जायेंगी।

ऋतु चित्रण के साथ सामाजिक सरोकारों का तालमेल हमें सैरे में ही दर्शित होता है :–

आरे आरे हां साउन सुहानी अरे मुरली बजै हां,
भदवां सुहानी मोर,
तिरिया सुहानी अरे जब ही लगै रे,
ललना झूलें पोंर के दोर ......
हुक्क हुइया हा हा

श्रावण के महीने में तो मुरली का स्वर भाता है और भादों के महीने में मयूर सुखद लगता है। स्त्री तभी अच्छी लगती है, जब उसका ललना दरवाजे के पास पोर में झूलता हो।

(8) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के अधिकारी व्यक्ति और अभ्यर्थी कौन हैं? क्या इन व्यक्तियों की विशेष भूमिका है या कोई विशेष दायित्व है। इस परम्परा और प्रथा के अभ्यास एवं अगली पीढ़ी के संचरण के निमित्त अगर हैं, तो वे कौन हैं और उनका दायित्व क्या है?

प्रस्तुत योजना के सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों में संबद्ध क्षेत्र का समस्त जनमानस है जो जनरंजन के लिए इन परम्पराओं का निर्वहन करते हैं। इनमें भागीदारी करने वाले को लाभान्वित होते ही है। साथ ही दर्शक–दीर्घा पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

संबंधित व्यक्तियों की भूमिका यह होती है कि ये अपनी परम्परायें दूसरी पीढ़ी को सौंपते हैं तथा इन्होंने अपनी पूर्व की पीढ़ी से ग्रहण की होतीं हैं अर्थात् यह क्रम वाचिक परम्परा के रूप में चलता रहता है। इसी तरह से इनका संचरण होता है। इसका दायित्व समस्त लोक समाज का है। समाज के ऐसे नियम बने हैं कि जिनसे यह परम्परा बिना किसी के कहे–सुने

तथा सीखे–सिखाये चलती है। यह क्रिया स्वाभाविक होती है। कोई वादन में रुचि रखे तो वह वादन सीखता है, गायन वाले गायन तथा नर्तन वाले नृत्य सीखते जाते हैं। इस पूरी परम्परा में वाचिक परम्परा ही उसका प्रभावी तत्व है जो हमें विरासत में मिली होती है।

(9) ज्ञान और हुनर कुशलता का वर्तमान में संचारित तत्वों के साथ क्या अंतःसंबंध है?

लोक कलाएं तो सभी की प्रिय होतीं हैं लेकिन इनमें कौशल या महारथ विरलों को ही प्राप्त होता है। लोककलाओं में हरेक बिन्दु व्यक्ति के कौशल पर आधारित होता है। अगर पूरा दल कोई नृत्य प्रस्तुत कर रहा है तो उसमें कुछ नर्तक ऐसे भी होते हैं जो समूह में ही प्रस्तुति देने के बाद अलग दिखते हैं। उनका पदचालन बड़ा चित्ताकर्षक होता है। कारण उनके प्रस्तुति का ढ़ंग, उसमें उनका कौशल, लगन तथा ताल के बहुत नजदीक रहकर उसकी प्रस्तुति। इसी तरह से गायन में भी अच्छे गायक अलग ही होते हैं। वादन में वादक को अलग से पहचाना जा सकता है। वाद्यों की निर्माण विधि, गायन विधि एवं नृत्य संरचना आदि।

हमने देखा कि सैरा नृत्य में कौशल की महत्वपूर्ण भूमिका है अतः किसी भी कलारूप में कौशल आवश्यक है अर्थात् कौशल एवं कला का महत्वपूर्ण संबंध है।

(10) आज वर्तमान में संबंधित सम्दाय के लिए इन तत्वों का सामाजिक व सांस्कृतिक आयोजन क्या मायने रखता है?

वर्तमान में सामाजिक व सांस्कृतिक आयोजन करने से हमारी लुप्त सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण, संवर्द्धन होता है। वर्तमान में आधुनिकीकरण एवं पाश्चात्यीकरण के शोर–शराबे से हटकर ये कार्यक्रम हमं मानसिक सुकून प्रदान करते हैं। इनसे समाज को जोड़ने का कार्य संभव है। इनसे जातिभेद, वर्गभेद दूर होते हैं और आपसी भाईचारा स्थापित होता है।

(11) क्या योजना के प्रस्तावित/परम्परा के तत्वों में ऐसा कुछ है जिससे प्रतिपादित अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार के मानकों के प्रतिकूल माना जा सकता है या फिर जिसे समुदाय, समूह या फिर व्यक्ति के आपसी सम्मान को ठेस पहुंचती हो या फिर वे उनके स्थाई विकास को बाधित करते हो। क्या प्रस्तावित योजना के तहत् या फिर सांस्कृतिक परम्परा में ऐसा कुछ है जो देश के कानून या फिर उनसे जुड समुदाय के समन्वय को या दूसरों को क्षति पहुंचाती हो, विवाद खड़ा करती हो?

प्रस्तुत योजना के तत्वों में ऐसा कुछ नहीं है जो अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार के मानकों के प्रतिकूल है। इससे न ही किसी समुदाय, समूह या व्यक्ति के आपसी सम्मान को ठेस पहुंचती है, न ही स्थायी विकास वाधित होते हैं। लोक कलाओं से देश के कानून को न ही किसी तरह की क्षति पहुंचती है तथा न ही कोई विवाद खड़ा हो सकता है।

(12) प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा की योजना क्या उससे संबंधित संवाद के लिए पारदर्शिता, सजगता और प्रोत्साहन को सुनिश्चित करती है?

हाँ, पूर्णरूपेण करती है।

(13) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए उठाये जाने वाले उपायों, कदमों, प्रयासों के बारे में जानकारी में जो उसको संरक्षित या संवर्धित कर सकते हैं –

1) औपचारिक एवं अनौपचारिक तरीके से प्रशिक्षण (संचरण)
2) पहचान, दस्तावेजीकरण एवं शोध
3) रक्षण एवं संरक्षण
4) संवर्धन एवं बढ़ावा
5) पुनरुद्धार/पुनर्जीवन

उपरोक्त दिये गये तमाम उपाय, कदम इस परम्परा को संरक्षित, सवंर्द्धित करने के उद्देश्य से आवश्यक हैं जो कि त्वरित रूप से इस कला रूप के संरक्षण हतु लागू किये जायें।

(14) स्थानीय राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत, परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए अधिकारियों ने क्या उपाय किये? उनका विवरण दें।

स्थानीय राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत, परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए उपाय –

स्थानीय स्तर पर कुछ शहरी क्षेत्रों में सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रदर्शन संबंधी संस्थायें हैं जो नृत्य रूपों को तैयार करके स्थानीय, राज्य, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रस्तुतियां देकर उस विधा के संरक्षण में अपना योगदान दते हैं। बुन्देलखण्ड अंचल में ऐसी अनेक संस्थायें हैं जो इस कार्य में संलग्न हैं। राज्य स्तर पर देश में कई अकादमियां स्थित हैं, जो लोक कलाओं के प्रदर्शन, लोकोत्सवों के माध्यम से करवाकर उनके संरक्षण में योगदान देती हैं। देश में ऐसे कई संस्थान हैं जो वाचिक परम्परा के रूपों के संरक्षण का कार्य कर रहे हैं। इसी तरह से राष्ट्रीय स्तर पर भी लोकनृत्यों, लोकगीतों, लोक संगीत तथा लोक शिल्प के विविध रूपों की प्रदर्शनी प्रस्तुति करवाकर उनका संरक्षण, संवर्धन कर रहे हैं।

(15) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा क तत्वों के व्यवहार जीवन्तता और भविष्य को क्या खतरे है? वर्तमान परिउद्देश्य के उपलब्ध साक्ष्यों और संबंधित कारणों का ब्यौरा दें।

योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के व्यवहार, जीवन्तता ओर भविष्य को होने वाले खतरे तथा उनके कारण निम्नानुसार हैं –

वर्तमान समय में आधुनिकता का ऐसा प्रभाव है जिसके चलते हमारी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर को छति पहुंची है। फिल्म, टी.व्ही. सीरियल और अन्य मनोरंजन से साधन आज देश के कौने–कौन में मौजूद हैं ओर उनमें जो भी परोसा जाता है वह सब देखकर लोग आज उनके अनुरूप ही चलना चाहते हैं। वे पुरानी घिसी–पिटी रूढ़ियों को नकारने लगे हैं, यहां तक कि

लोग अपनी मूल बोली को भी नहीं अपनाना चाहते, यह मीडिया का ही प्रभाव है जो सर चढ़कर बोल रहा है। हमें यह विदित नहीं है कि हम इसके प्रभाव में अपनी बहुमूल्य सांस्कृतिक धरोंहर को भूल रहे हैं। आज हम न तो लोकगीत सुनना पसंद करते हैं न ही लोकनृत्य या लोक संगीत को। हम उसके बजाय कम्प्यूटराइज्ड म्यूजिक को ज्यादा पसंद करने लगे हैं। यह सोच भविष्य के लिए एक बहुत बड़ा खतरा है। अगर हम अपनी विरासत को सहेजना चाहते हैं तो हमें उसमें रूचि लेनी पड़ेगी।

(16) संरक्षण के क्या उपाय अपनाने का सुझाव है? (इसमें उन उपायों को पहचान कर उनकी चर्चा करें जिससे कि प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के संरक्षण और संवर्धन को बढ़ावा मिल सके) ये उपाय ठोस हों जिससे भविष्य की सांस्कृतिक नीति के साथ आत्मसात किया जा सके ताकि प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों का राज्य स्तर पर संरक्षण किया जा सके।

संरक्षण के उपाय एवं सुझाव –

हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करना है तो उसे कई रूपों में सुरक्षित रखा जा सकता है। जैसे – उनका प्रदर्शन, उन कलारूपों का दस्तावेजीकरण, फिल्मांकन, ध्वन्यांकन, उनका प्रचार–प्रसार आदि ऐसे कारक हैं जिनसे कि इनका संरक्षण, संवर्द्धन हो सकेगा। उनके प्रदर्शन को देखकर हम उनसे प्रभावित होंगे और उनके मूल के बारे में जान पावेंगे। इन कलारूपों का दस्तावेजीकरण होगा तो वे किसी न किसो प्रकार से सुरक्षित, संरक्षित तो रहेंगे। इसी तरह से फिल्मांकन एवं ध्वन्यांकन भी एक कारगर उपाय है। संचार माध्यमों ने आकाशवाणी, दूरदर्शन, पेपर, पत्रिकायें भी इनके संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

विवेच्य कलारूप के संरक्षण के उपाय :–

1. सैरा नृत्य की कार्यशाला लगाई जाये, जिससे इच्छुक कलाकारों की जानकारी हो सके।

2. स्थानीय स्तर पर सैरा नृत्य प्रदर्शन हेतु मंच निर्माण कराये जायें, जहां प्रस्तुतियां हो सकें।
3. सैरा नृत्य के गीतों का दस्तावेजीकरण अत्यावश्यक है।
4. लोकोत्सवों में नृत्य की भागीदारी सुनिश्चित हो तथा चयनित कलाकारों को आमंत्रित किया जाये।
5. संबंधित व्यक्तियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाये इससे नयी पीढ़ी को प्रोत्साहन मिलेगा तथा प्राढ़ कलाकारों को प्रशिक्षण दिये जाने में रूचि होगी।
6. बुन्देलखण्ड अंचल के नृतय सैरा के प्रशिक्षण हेतु प्रशिक्षण केन्द्र खोला जाये।
7. सैरा नृतय प्रतियोगिताओं का आयोजन हो, जिससे एक ही स्थान पर बहुतेरे कलाकार एकत्रित हों, वे एक–दूसरे के नृत्य को देखकर अपने कलारूप में महारथ हासिल कर सकें।
8. संबंधित संस्थाओं जो इस क्षेत्र में संलग्न हैं, उन्हें प्रोत्साहन दिया जाये।
9. कलारूप को व्यवसायिक बनाने के साथ–साथ उस समुदाय विशेष को भी स्थानीय व्यवसाय के नये रास्ते खोले जायें, उपाय सोचे जायें।
10. चयनित कलारूप की ज्ञान परिपाटी और लोक ज्ञान परम्परा को अनिवार्य शिक्षा के रूप में स्कूल, कालेज स्तर पर लागू किया जाये।
11. विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जाये एवं सांस्कृतिक चेतना के उद्देश्य से इसे पत्रकारिता से जोड़ा जाये।
12. महाविद्यालयों, विद्यालयों में इन कलारूपों के प्रशिक्षण हेतु डिप्लोमा एवं सार्टिफिकेट कोर्स चलाये जायें। इससे दो काम एक साथ हो सकेंगे। एक तो इस कला से संबंधित कलाकारों को प्रशिक्षक के रूप में रखा जायेगा और दूसरा, नये प्रशिक्षार्थी कलारूपों को सीखकर इस कला के समर्थ एवं जानकार बनेंगे।

(17) सामुदायिक सहभागिता (प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों के संरक्षण की योजना में समुदाय, समूह, व्यक्ति की सहभागिता के बारे में लिखें)।

सामुदायिक सहभागिता : निम्न समुदाय, समूह, व्यक्ति की प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत व परम्परा के तत्वों के संरक्षण में योगदान है –

सौर जनजाति – सौर जनजाति ने सैरा नृत्य कलारूप को तो संरक्षित किया ही है साथ ही साथ अन्य सामान्य जाति के लोगों को प्रशिक्षण में योगदान दिया है। इस जनजाति के बहुतेरे कलाकार उत्सवों में शामिल होकर उस परम्परागत् कलारूप में सहायक बनते हैं। बुन्देलखण्ड में मालथौन, बण्डा, छतरपुर, सागर, बड़तूमा में ऐसे सौर जनजाति के कलाकार हैं जो प्रसिद्ध नर्तक एवं दलों में अपनी भागीदारी प्रस्तुत करते हैं।

खंगार समुदाय – केसली एवं देवरी विकासखण्ड में इस विधा से संबंधित ऐसे कलाकार हैं जो स्थानीय स्तर पर इस कला रूप की जीवन्तता बनाये हुए हैं। इनकी प्रस्तुतियां तो स्तरीय होती ही हैं साथ ही ये इच्छुक कलाकारों को भी प्रशिक्षित करते हैं।

भोई समुदाय –बुन्देलखण्ड के कुछक विकासखण्डों में भोई समुदाय निवासरत् है। उस समुदाय में सैरा नृत्य के बड़े निपुड़ कलाकार तथा गायक हैं वे सैरा नृतय तथा गायन के महारथी हैं। भादों में कजली के दिन जब सैरा होता है तो इनकी प्रस्तुतियां देखने दूर–दूर से लोग आते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि इस कलारूप के संरक्षण में इस समुदाय की महत्वपूर्ण भूमिका है।

सहभागी समूह – इस कलारूप के संरक्षण में कुछ समूहों की अहं भूमिका है –

1. ललिपतुर जिले की सैरा पार्टी :यह पार्टी श्री वी.एन. चौबे के निर्देशन में विगत् 25 वर्षों से संचालित है। इनके दल न सैकड़ों प्रस्तुतियां

देकर इस क्षेत्र में सैरा नृत्य का संरक्षण किया है, वे साधुवाद के पात्र हैं।

2. कनेरादेव सैरा दल : कनेरादेव ग्राम का यह प्रसिद्ध सैरा नृत्य दल विगत् 30 वर्षों से सैरा नृत्य की प्रस्तुतियां दे रहा है। इसके निर्देशक श्री रामसहाय पाण्डे जी हैं। आप राई नृत्य के महारथी होने के साथ ही सैरा नृत्य के कुशल निर्देशक हैं। इस दल में गौण जनजाति के कलाकार प्रमुख रूप से अपनी भागीदारी प्रस्तुत करते हैं।

3. बड़तुमा सैरा पार्टी : ग्राम बड़तुमा में सैरा जनजाति की सैरा पार्टी अपनी प्रस्तुतियां देती है तथा स्थानीय स्तर पर यह दल प्रतियोगिताओं के प्रथम स्थान पर रहता है। इसके संचालक स्व. वृन्दावन सौर थे, लेकिन वर्तमान में इनके साथी ही दल का संचालन कर रहे हैं।

4. घाना सैरा नृत्य दल : घाना ग्राम का यह नृत्य दल श्री द्वारिका लोधी के निर्देशन में संचालित है। इसमें आस–पास के कई ग्रामों के युवक अपनी भागीदारी प्रस्तुत करते हैं।

5. लोक कला अकादमी, सागर : यह अकादमी श्री विष्णु पाठक जी के निर्देशन में विगत् 50 वर्षों से संचालित है। श्री पाठक जी बुन्देलखण्ड के समस्त लोकनृत्यों के कुशल निर्देशक हैं तथा सैरा नृत्य की भी प्रमुख रूप से लोकोत्सवों में प्रस्तुति देते हैं।

6. लोक अभिनव, सांस्कृतिक मंच ग्राम धनगुवां – यह दल बुन्देलखण्ड अंचल में वर्तमान में प्रभुत्व दल है। इसके निर्देशक श्री राजेन्द्र चौबे जी हैं। आपने सैरा नृत्य में संरक्षण में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। विगत् 30 वर्षों से आपने स्थानीय, जिला स्तरीय, राज्य स्तरीय, राष्ट्रीय स्तर पर तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुतेरी प्रस्तुतियां दी हैं।

यह दल नये–नये कलाकारों को प्रशिक्षण देता है तथा राष्ट्रीय स्तर पर इस दल ने अनेक प्रतियोगितायें जीती हैं। अधिकांश सैरा नृत्य दल ने

अनेक प्रतियोगितायें जीती हैं। अधिकांश सैरा नृत्य दल के कलाकार एक डंडे से नृत्य करते हैं लेकिन इस दल में प्रत्येक कलाकार दो डंडों के साथ नृत्य करता है। इस दल का नर्तन तथा गायन सर्वेश्रेष्ठ है।

सहभागी व्यक्ति :–

1. श्री वृन्दावन सौर
2. श्री रामसहाय पाण्डे
3. श्री बी.एन. चौबे
4. श्री विष्णु पाठक
5. श्री द्वारिका लोधी
6. श्री जगन्नाथ प्रसाद
7. श्री राजेन्द्र चौबे
8. श्री हरीसिंह लोधी
9. श्री विन्दा कुम्हार
10. श्री लक्ष्मी प्रसाद विश्वकर्मा

संरक्षण –

लोक कलायें समूह की कलायें हैं, ये न तो व्यक्तिगत होती हैं न ही इनका उद्देश्य व्यक्ति विशेष तक सीमित होता है। ये तो समूह की भावना को लेकर चलतीं हैं इसीलिए समाज के लिए ये बड़ी महत्वपूण हैं। इनके किसी भी रूप को देखें तो वह समूह द्वारा ही संपादित होता है, जैसे नृत्य, गायन, वादन, शिल्प या अन्य कोई कौशल। ये समूह में ही नहीं होते हैं। इसलिए इनका संरक्षण समुह की सहभागिता द्वारा हो सकता है। कला के कुछ रूप जातिगत् होते हैं। जिनको एक विशेष जाति द्वाराकिया जाता है। जैसे ढ़िमरयाई, काड़रा, कछयाई, अहिराई आदि इनके संरक्षण का दायित्व उस समुदाय विशेष का होगा जो उस रूप से संबद्ध है। लेकिन किसी भी कला का संरक्षण समूह के बिना संभव नहीं हो सकता। इसमें व्यक्ति की सहभागिता हो सकती है लेकिन वह भी अपना समूह बनाये तब ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकेगा।

विषेशज्ञ :—

1. डॉ. कपिल तिवारी : पूर्व निर्देशक आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल (म.प्र.)

2. श्री राहुल रस्तोगी : कार्यक्रम अधिकारी, लाक परिषद भोपाल

3. बसंत निरगुणे : पूर्व प्रधान संपादक चौमासा, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल

4. अशोक मिश्र : प्रधान संपादक, म.प्र. आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल

5. श्री प्रेम स्वरूप तिवारी : कार्यक्रम अधिकारी, दक्षिण मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर

6. श्री विनय उपाध्याय : संपादक, रंग संवाद पत्रिका भोपाल

7. श्री नवल शुक्ल : पूर्व संपादक चौमास, भोपाल

सैरा नृत्य के लोक कलाकारों के नाम :—

1. श्री दीनदयाल पटैल, ग्राम धनगुवां
2. श्री हरीसिंह लोधी, मेंडकी
3. श्री रामकिशन ठाकुर, बिलहरी
4. श्री जगन्नाथ चौबे, नाहरमऊ
5. श्री बबलू पटैल, पुत्तर्रा
6. श्री महेन्द्र गोस्वामी, ग्राम बेरखेड़ी
7. श्री शरद दीख्शित, भुसौरा
8. श्री प्रकाश दुबे, आफतगंज
9. श्री गौतम पटेल, धनगुवां
10. श्री गोपाल पटैल, धनुगुवां
11. श्री गोपाल विश्वकर्मा, गेहूंरास

12. श्री सुरेश चौबे, मनकापुर

(18) संबंधित समुदाय क संघठन (नों) या प्रतिनिधि (यों) (प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से जुडे हर समुदायिक संगठन या प्रतिनिधि या अन्य गैर सरकारी संस्था जैसे कि एसोसिएशन, आर्गेनाइजेशन, क्लब, गिल्ड, सलाहकार समिति, स्टीयरिंग समिति आदि)

विवेच्य विषय से संबंधित देश में कई संगठन हैं जो प्रदेश, स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इनके संरक्षण, संवर्द्धन विषयक काम कर रहे हैं। हमारे देश में सात कल्चरल जोन हैं जो अपने क्षेत्र के अनुसार कला रूपों का प्रदर्शन, प्रस्तुति, दस्तावेजीकरण, फिल्मांकन, ध्वन्यांकन, प्रचार–प्रसार आदि क द्वारा कर रहे हैं। स्थानीय स्तर पर भी कई सांस्कृतिक संगठन, अकादमी तथा एन.जी.ओ. हैं।

सहभागी व्यक्ति :–

1. डॉ. कपिल तिवारी : पूर्व निर्देशक आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल (म.प्र.)
2. श्री राहुल रस्तोगी : कार्यक्रम अधिकारी, लोक परिषद भोपाल
3. बसंत निरगुणे : पूर्व प्रधान संपादक चौमासा, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल
4. अशोक मिश्र : प्रधान संपादक, म.प्र. आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
5. श्री प्रेम स्वरूप तिवारी : कार्यक्रम अधिकारी, दक्षिण मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर
6. श्री विनय उपाध्याय : संपादक, रंग संवाद पत्रिका भोपाल
7. श्री नवल शुक्ल : पूर्व संपादक चौमास, भोपाल

(19) किसी मौजूदा इन्वेंटारी, डेटाबेस या डाटा क्रिएशन सेंटर (स्थानीय/राज्यकीय/राष्ट्रीय) की जानकारी जिसका आपको पता हो या आप किसी कार्यालय, एजेन्सी, आर्गेनाईजेशन या व्यक्ति की जानकारी को इस तरह की सूची को संभाल कर रखता हो, उसकी जानकारी दें।

मौजूदा इन्वैटरी, डेटाबेस या डाटा क्रिएशन सेन्टर की जानकारी रखने वाली संस्थाएं –

1. मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
2. कला परिषद, भोपाल
3. दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर
4. उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद
5. आदिवर्त, खजुराहो
6. केशव शोध संस्थान, ओरछा
7. बुन्देली विकास परिषद, बसरी, छतरपुर
8. वन्या प्रकाशन, भोपाल
9. लोकरंग दर्पण कला केन्द्र, सागर

(20) के प्रस्ताव सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से संबंधित प्रमुख प्रकाशित संदर्भ सूची या दस्तावेज (किताब, लेख, ऑडियो–विसुअल सामग्री, लाइब्रेरी, म्यूजियम, प्राइवेट सहृदयों संग्राहकों, कलाकारों/व्यक्तियों के नाम और पते तथा वेबसाइट आदि जो संबंधित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों के बारे में हों।

प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से संबंधित प्रमुख प्रकाशन –

1. चौमासा, आदिवासी लोक कला परिषद् एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
2. बुन्देली बसंत, बसारी, छतरपुर
3. बुन्देली अर्चन, दमोह
4. मामुलिया, छतरपुर
5. ईसुरी, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर
6. बुन्देली दर्शन, हटा

7. तुलसी अकादमी, भोपाल

8. मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल

9. कला संगम, उत्तर मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाबाद

laf{kIr thou ifjp;

नाम : ज्ञान बुन्देला
(मा.प्र.से.का.) पूर्व सं. केन्द्र निदेशक, आकाशवाणी, सागर

पिता का नाम : स्व. श्री जी.एस. बुन्देला

निवासी : एम. 16, सोमनाथपुरम् बाघराज वार्ड, तिली रोड़ सागर (म.प्र.)

सम्पर्क : 09826816272

जन्म तिथि : 02 अप्रैल, 1954

जन्म स्थान : इटायल, तहसील मऊरानीपुर, जिला झांसी (उ.प्र.)

शिक्षा : स्नातक डिप्लोमा कृषि एवं प्रसार

प्रशिक्षण :—

(1) कर्मचारी प्रशिक्षण संस्थान, नई दिल्ली
(2) क्षेत्रीय कर्मचारी प्रशिक्षण संस्थान, हैदराबाद (आंध्रप्रदेश)
(3) मैनेज : राजेन्द्र नगर, हैदराबाद (आंध्रप्रदेश)
(4) क्षेत्रीय कर्मचारी प्रशिक्षण संस्थान, कटक (उड़ीसा)
(5) गो.ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्व विद्यालय, पंतनगर (उ.प्र.)
(6) डॉ. वाय.एस. परमार, विश्व विद्यालय, नौणी, सोलन (हि.प्र.)
(7) यूनीसेफ, भोपाल

कार्य विवरण :—

वर्ष 19836 में एस.एस.सी. से चयनित हाकर वर्ष 2014 तक आकाशवणी के जबलपुर, शहडोल और सागर केन्द्रों पर संवाददाता, कार्यक्रम अधिकारी और सहायक केन्द्र निदेशक एवं कार्यक्रम प्रमुख के पदों पर अपनी सेवाएं देते रहे। इस दौरान देश की प्रख्यात प्रतिभाओं, अधिकारियों, कलाकारों, जनसेवकों तथा विभिन्न गणमान्य व्यक्तियों के सम्पर्क में रहे, उनसे भेंट वाताएं, रिकॉर्ड कर प्रसारित की। साथ ही दूर दराज क्षेत्रों से भी उदीयमान कलाकरों एवं प्रतिभाओं को खोजकर उन्हें आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से जोड़ा और देश के लब्ध प्रतिष्ठित कलाकारों, साहित्यकारों को आमंत्रित श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत कर एवं उनकी रिकॉर्डिंग कराके प्रसारित कराई। साथ ही शासन की जनकल्याणकारी योजनाओं को जन—जन तक पहुंचाने का अथक प्रयास किया।

कृतियां :—

(1) उजालों की ओर (अप्रकाशित)
(2) मेरी प्रतिनिधि कविताएं (अप्रकाशित)

संपादन :— विलुप्त प्राय बुन्देलील लोकोक्तियां (अप्रकाशित)

लेखन :— कविता, कहानी, रूपक, रिपोर्टज, संवाद, स्लेगन आदि।

पुरस्मार एवं सम्मान :—

हितकारिणी सभा जबलपुर द्वारा रजत पदक से सम्मानित।

वर्तमान में	:	लेखन कार्य में व्यस्त तथा कलाकारों और प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करने में प्रयासरत्।

laf{klr thou ifjp;

नाम	:	विष्णु पाठक
पिता का नाम	:	श्री एन.पी. पाठक
जन्म तिथि	:	19 जून, 1935
जन्म स्थान	:	सागर (मध्यप्रदेश)
शिक्षा	:	एम.ए. प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातन सन् 1960
संप्रति	:	पूर्व विभागाध्यक्ष एवं संस्थापक निर्देशक युवक कल्याण एवं सांस्कृतिक गतिविधियां तथा प्रदर्शनकारी कला विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर (पूर्व सागर विश्वविद्यालय) विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
पूर्व सचिव	:	श्रव्य एवं दृष्य शिक्षा विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
निर्देशक एवं संस्थापक	:	श्रव्य दृश्य अनुसंधान केन्द्र (ए.बी.आर.सी.) फिल्म निर्माण केन्द्र, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
संस्थापक एवं निर्देशक	:	लोक कला अकादमी, पद्माकर भवन बरियाघाट, सागर (म.प्र.)
दूरभाष नं.	:	07582–236224, मोबा.नं. 09826356766

उपलब्धियां संक्षिप्त में :–

देश की लोककलाओं विशेषकर लोकनृत्यों का प्रशिक्षण, प्रदर्शन, संरक्षण एवं संवर्धन के लिये पांच दशकों से कार्यरत् हैं और निःशुल्क सेवाएं दी हैं।

(1) डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में एम.ए. के छात्र रहते हुए युवाओं को युवक कल्याण एवं सांस्कृतिक गतिविधियां तथा प्रदर्शनकारी कलाओं का विभाग स्थापिता किया। प्रथम विभागाध्यक्ष एवं संस्थापक।

(2) श्रव्य, दृश्य अनुसंधान केन्द्र (फिल्म निर्माण केन्द्र) ए.वी.आर.सी. की स्थापना की, संस्थापक निर्देशक के रूप में डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय में।

(3) देश की लोककलाओं के प्रशिक्षण, प्रदर्शन, संरक्षण एवं संवर्धन के लिए अलग से युवाओं को प्रशिक्षण देने के लिये लोककला अकादमी की स्थापना की।

(4) वर्ष 1956 से लेकर 2001 तक अखिल भारतीय अंतर विश्वविद्यालयीन युवक समारोह, कामनवेल्थ युवक समारोह,

अन्तर्राष्ट्रीय, निर्गुट देशों के युवक समारोह तथा अन्य युवक समारोहों में सामूहिक लोक नृतयों में युवाओं को प्रशिक्षित कर 60 से अधिक पुरस्कार एवं चेम्पियनशिप्स अर्जित की और स्वयं अपना रिकार्ड तोड़ा, 1957 में दिल्ली के तालकटोरा गार्डन के खुले रंगमंच पर प्रथम राष्टपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के तथा प्रथम विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्री सी.डी. देशमुख के समक्ष प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। उसके बाद प्रत्येक वर्ष अखिल भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत होते रहे।

(5) 1987 में सोबियत रूप की यात्रा अपने 16 सदस्यीय कलाकारों के दल के साथ की और 60 से अधिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये। ताशकंद में भारत और सोवियत रूप के युवक समारोह के संयोजक बने।

(6) देश में जिन स्थानों पर युवक समारोह में विजित रहे तथा प्रदर्शन किये वे संक्षिप्त में इस प्रकार हैं :–

- 1956 नई दिल्ली, 1957 नई दिल्ली, 1958 नई दिल्ली, 1959 मैसूर, 1960 जयपुर, 1961 नई दिल्ली, 1962 चीन युद्ध के कारण युवक समारोह नहीं हुआ। 1963 नई दिल्ली, 1964 नई दिल्ली, 1965 पचमढ़ी, 1966 बंबई, 1967 भोपाल–उज्जैन–इंदौर, 1968 जम्मू कश्मीर एवं पंजाब, 1969 कामनवेल्थ युवक समारोह नई दिल्ली, 1970–71 राजस्थान, 1972 सांची, त्रिवेन्द्रम, 1973 लखनऊ, अन्तर्राष्ट्रीय, 1974 जयपुर, 1975 उज्जैन, 1975 भोपाल, इसप्रिंट 75 चेम्पियनशिव अर्जित की। 1976 इन्दौर फिल्म शायद में लोकनृत्य प्रदर्शन।
- वर्ष 1977 जयपुर, 1979 बंबई, 1980–81 बड़ोदरा, 1981 मद्रास फिल्म धनवाद, 1985 नई दिल्ली, निर्गुट देशों का युवक समारोह 1985 भोपाल, 1986 गुवाहाटी, 1987 सोवियत रूप, 1988 नई दिल्ली, जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, 1989 नई दिल्ली, भारतीयम, 1989 उदयपुर, मूमल ट्राफी अर्जित की।
- वर्ष 19901 रुकड़ी, 1990 बनारस, 1991 पचमढ़ी, जयपुर, 1992 बुन्देली मेरा सागर, 1992 पचमढ़ी, इन्दौर, 1994

भोपाल, 1994 जबलपुर, 1994 टी.वी. मेट्रो चैनल का उद्घाटन भोपाल, 1995 भोपाल प्रथम अशैक्षणिक युवाओं का राष्ट्रीय युवक समारोह, 1995 गुलबरगा, 1995 भोपाल, 1995 हरियाणा, 1995 भोपाल, 1995 पचमढ़ी, 1996 ग्वालियर, 1996 आनंद गुजरात, गोल्डन कम, 1996 सागर, प्रथम युवक समारोह, 1997 बम्बई, 1997 भोपाल, 1998 नागपुर, ग्वालियर, नई दिल्ली, 1999 कालीकट, 1999 भोपाल लोकरंग, 1999 ग्वालियर, 2000 भोपाल, नागपुर, त्रिवेन्द्रम, 2000 खजुराहो, 2001 हिमाचल प्रदेश, सोनल, 2001 भोपाल, 2002 द्वारिका गुजरात, 2002 जबलपुर, 2002 पातालकोट, 2003 भोपाल, 2003 ग्वालियर, 2004 रोटरी इंटरनेशनल, 2004 लोक समारोह 10 ग्राम अंचल में प्रस्तुतिकरण, 2004 अखिल भारतीय फुटवाल के उद्घाटन पर 2004 वर्कशाप, 2004 सागर, 2005 सागर संभाग, 2005 भोपाल, 2005 नाकरंग भोपाल, 2006 नई दिल्ली, 2006 नई दिल्ली, म.प्र. का गोल्डन जुबली वर्ष 2006 ग्वालियर, 2007 बेगमगंज युवा महोत्सव, 2007 बुन्देली लोकोत्सव, हटा, 2007 बनारस संगीत नाटक एकेडमी का आयोजन, 2008 बसारी (खजुराहो प्रदर्शन एवं सम्मानित।

- देश के 1956 से लेकर 2001 तक सभी राष्ट्रपति, प्रधानमंत्रियों एवं विदेशी अतिथियों को राष्ट्रपति भवन त्रिमूर्ति भवन आदि में लोकनृत्यों का प्रदर्शन किया। प्रशंसा अर्जित की।
- बम्बई का मद्रास के फिल्म फेयर अवार्ड कार्यक्रम में लोकनृत्यों का पदर्शन किया, विशेष आमंत्रण पर।
- बम्बई में फिल्मों का नृत्य निर्देशन एवं लोक नृत्यों का प्रदर्शन फिल्म नई उमर की नई फसल, शायद, करवाचौथ, कफन आदि में किया।
- जम्मू काश्मीर एवं पंजाब में भारतीय सैनिकों को सीमारेखा पर 10 से अधिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये।
- भारत सरकार के संस्कृति विभाग द्वारा सीनियर फैलोशिप बुन्देलखण्ड के लोक नृत्यों पर काम करने के लिए प्रदान

की।

- बुन्देलखण्ड के लोकनृत्यों को सबसे पहले 1957 में अखिल भारतीय मंच पर प्रस्तुत किया तथा लोकनृत्यों के प्रशिक्षण की पद्धति विकसति की।
- म.प्र. के पहले कलाकार निर्देशक अपने 16 सदस्यों के साथ सोवियत रूप की यात्रा की और सफल प्रदर्शन किया।
- देश के पहले युवा निर्देशक जिसके एम.ए. के तुरन्त बाद नौजवानों पर बनने वाली फिल्म 'नई उमर की नई फसल' में लोकनृत्य औ बैले प्रस्तुत किये।
- देश के पहले नृत्य निर्देशक जिसने देश व विदेशी अतिथियों के समक्ष राष्ट्रपति भवन, प्रधानमंत्री भवन तथा अन्तर्राष्ट्रीय समारोहों में लगातार प्रदर्शन किये।
- देश के पहले विद्यार्थी जिसने लोक कलाओं के लिए विश्वविद्यालय में अलग से विभाग की स्थापना की तथा शास्त्रीय, सामान्य एवं लोक प्रदर्शनकारी कलाओं का पाठ्यक्रम एवं पी.जी. डिप्लोमा शुरू किया।
- कामनवेल्थ युवक समारोह में विदेशी छात्राओं को भारतीय लोक नृत्यों में 36 घंटे में प्रशिक्षित कर राष्ट्रपति भवन में प्रस्तुति दी।
- देश की लोक कलाकारों को निःशुल्क प्रशिक्षित करने वाले पहले कोरियोग्राफर जिसने युवाओं को प्रशिक्षित करने के लिये लोक कला एकेडमी की स्थापना की तथा अनेक लोक प्रतिष्ठा समारोह आयोजित किये।
- पहली बार बुन्देली लोक कलाओं के लिये बुन्देली उत्सव चार दिवसीय आयोजित किया जिससे 40 हजार दर्शकों ने देखा, उसी परम्परा में बुन्देली उत्सव प्रतिवर्ष हटा में आयोजित कर रहे।
- सागर के नौजवानों को प्रशिक्षित कर 15 से अधिक संस्कृति दल तैयार किये जो देशभर में अपने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं।

- म.प्र. के गणतंत्र दिवस पर म.प्र. के राज्यपाल से श्रेष्ठ ट्राफी अर्जित की।
- ग्राम अंचलों में रहने वाले ग्रामीणों को डेनेडा की स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं को प्रसारित करने के लिये दस से अधिक लोक कलाओं द्वारा लोक समारोह आयोजित किये।
- हेल्थ एक्सप्रेस सागर आगमन पर एक माह तक सांस्कृतिक कार्यक्रम निःशुल्क प्रस्तुत किये।
- देश के पहली रंगीन फिल्म 1959 में जवारा लोकनृत्य का निर्माण किया तथा राजभवन पंचमढ़ी में।
- सागर में फिल्म एवं सी.डी. का निर्माण किया, विषय राष्ट्रीय पक्षी मयूर, मानवीय कटपुतलियों का प्रदर्शन, गढ़पेहरा धाम पहली बुन्देली भाषा की फिल्म दौदरा एक्सप्रेस निर्माणाधीन।
- डिजिटल सी.डी. का निर्माण लाला हरदौल, बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य, बुन्देलखण्ड का जन्म से लेकर नृत्य तक का लोक संगीत पर डिजिटल सी.डी.।
- कृष्ण भक्त मीराबाई के 28 पदों पर नृत्य कोरोग्राफी कर रंगीन फिल्म बनाई जिसकी शूटिंग मीराबाई के जन्म स्थल राजस्थान में मेलता, द्वारिका, मथुरा, वृन्दावन, चित्तौड़ आदि में की और नई प्रतिभाओं को अवसर दिया।
- लोक कलाओं पर अनेकों वर्कशाप्स आयोजित कीं।
- लोक कलाओं के क्षेत्र में सबसे अधिक सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त करने वाले अकेले व्यक्तित्व आप युवाओं के कला गुरु के नाम से विख्यात हैं और लोक कलाओं के अकेले लोकविद हैं। जिनका सम्मान सम्पूर्ण प्रदेश में अनेकों बार किया गया।
- शोध एवं सर्वेक्षण का कार्य बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य पर, बस्तर के लोक नृत्यों पर, छिंदवाड़ा जिले के पाताल कोट जमीन से एक हजार फुट नीचे के आदिवासियों के लोकनृत्यों पर।
- बुन्देलखण्ड के कथानकों पर लोक संगीतकाय निर्माण (लाला हरदौल, ओरछा की नृत्य की प्रवीण राय, बेलातमाल गढ़पेहरा

की नटनी) जो दो पहाड़ियों के बीच नाची थी।

- अनेकों छात्रवृत्ति धारकों (सीनियर और जूनियर फैलोशिप के) जो भारत सरकार द्वारा दी जाती है, उनका निःशुल्क मार्ग—दर्शन।

laf{klr thou ifjp;

नाम : पं. हरगोविन्द ''विश्व'' मैथिल

पिता का नाम : स्व. श्री हरप्रसाद मैथिल पंडित

जन्म तिथि : 11 मार्च 1934

जन्म स्थान : ग्राम चारटौरिया, जिला सागर (म.प्र.)

शिक्षा : एम.ए., एम.कॉम, बी.एड., संगीत प्रभाकर

भाषा ज्ञान : हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, बुन्देली

रुचि : शिक्षा, संगीत साहित्य, समाजसेवा

साहित्य : हिन्दी बुन्देली काव्य सृजन, लेखन
(राष्ट्रीय, सामाजिक, धार्मिक, लोक साहित्य)

संगीत : शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, बुन्देली लोक संगीत, आल्हा, रासो
(गायन एवं प्रस्तुतिकरण)

नृत्य : बुन्देली लोकनृत्य तथापि अन्य प्रदेशों के लोकनृत्य

उपलब्धियां :– (1) बुन्देली लोकसंगीत के ''ग्रामोफोन रिकार्ड्स'' क्रमशः

1. एच.एम.व्ही. (कलकत्ता)
2. पॉलीडार इंडिया लिमि. (बाम्बे, हेमवर्ग)
3. म्यूजिक इंडिया लिमि. (बाम्बे)
4. सरगम लिमि. बनारस (कुल 14 रिकाड्र्स)

(2) कंसेप्ट एवं सी.डी. (बुन्देली लोकगीत एवं आल्हा गायन)

(3) आकाशवाणी एवं दूरदर्शन से गीत, काव्य प्रसारण

(4) रेडियो से (B. High) ग्रेड आर्टिस्ट गत् 30 वर्षों से

(5) फिल्म गीत लेखन

1. आकाशवाणी–दिल्ली, लखनऊ, भोपाल, छतरपुर, रीवा, ग्वालियर, जबलपुर
2. दूरदर्शन – दिल्ली, लखनऊ, भोपाल (कवि एवं गायक) हिन्दी एवं बुन्देली गायन एवं काव्य पाठ्य।

प्रतिनिधित्व

1. युवक समारोह में प्रतिनिधित्व (नर्तन, गायन, वादनं) दिल्ली, मैसूर, जयपुर
2. स्काउट जम्बूरी एशिया पेसिफिक हैदराबाद (म.प्र. सांस्कृतिक दल लेकर)

प्रस्तुतिकरण : आल्हा गायन –

- राष्ट्रीय स्तर पर दिल्ली में हिन्दी अकादमी द्वारा।

- ○ इलाबाद सांस्कृतिक केन्द्र द्वारा
- ○ प्रादेशिक जेल मीट भोपाल में
- ○ दूरदर्शन व रेडिया से प्रसारित

: जनमंचों पर –

- ○ बुन्देली लोकसंगीत एवं काव्य पाठ
- ○ हिन्दी एवं बुन्देली

: शास्कीय स्तर पर –

- ○ काव्य पाठ, लोकगायन, रेडियो, दूरदर्शन से।
- ○ हिन्दी एवं बुन्देली

संयोजक : ईद, दिवाली मिलन एकता समारोह गत् 31 वर्ष से

प्रकाशन : हिन्दी बुन्देली कवितायें एवं लेख विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में, प्रकाशनों में (राष्टथीय प्रकाशनों में भी)

सम्मानोपाधियां :

1. स्वरमणि – बंदना आर्ट दिल्ली से
2. कवि भूषण – बृज साहित्य संगम आगरा से
3. साहित्य सरस्वती – संस्कृति संस्थान मथुरा (उ.प्र.) से
4. सरस्वती सम्मान, लोक साहित्य सम्मान – गुंजन कला सदन जबलपुर से
5. बुन्देली रत्न – संतोष सिंह अकादमी छतरपुर से
6. बुन्देली गौरव – बुन्देली विकास संस्थान, बसारी
7. ''मिलन'' मध्यप्रदेश से –लोकभारती
8. अमरदान अलंकरण – लोक संस्कृति सेवा निधि उरई से

सम्मान एवं प्रशस्ति पत्र :–

1. मदर टेरेसा सम्मान – रोटरी क्लब, सागर के सौजन्य से (स्वयं मदर टेरेसा द्वारा प्रशस्ति पत्र)
2. नगर निगम, सागर द्वारा ''नागरिक सम्मान''
3. जिला प्रशासन द्वारा – कौमी एकता सम्मान
4. पुलिस अकादमी सागर द्वारा एवं अमरदान सम्मान – लोक संस्कृति सेवा निधि उरई (उ.प्र.)
5. श्रीमान् सेठ ''दाजी सम्मान'' डालचंद जैन (लोक के सौजन्य से)
6. डॉ. सर हरीसिंह गौर संस्थान से
7. साहित्य सागर संस्थान से नर्मदा प्रसाद गुप्त साहित्यकार सम्मान
8. जिला, खेल एवं युवक कल्याण संस्थान से

	9.	ईसुरी सम्मान – ईसुरी संस्थान, पथरिया, दमोह से
	10.	लोक संगीत शिरोमणि अकादमी, सागर से
	11.	बुन्देल श्री – अ.भा. बुन्देलखण्ड परिषद, भोपाल
	12.	ई.टी.व्ही. उत्तर प्रदेश द्वारा लोक साहित्यकार सम्मान
सानिध्य :–	1.	स्व. पं. जवाहरलाल नेहरू (पूर्व प्रधानमंत्री)
	2.	स्व. सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्ण पूर्व राष्ट्रपति
	3.	स्व. लाल बहादुर शास्त्री
	4.	श्री शंकर लाल शर्मा
संयोजन :–		अखिल भारतीय बुन्देलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद, शाखा सागर
अध्यक्ष :–		ग्राम श्री साहित्य परिषद, ढ़ाना, सागर (म.प्र.)
उपाध्यक्ष :–		म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, शाखा सागर
सम्प्रति :–		शिक्षा विभाग से सेवानिवृत्त होकर साहित्य एवं संगीत साधना व समाज सेवा।

अब तक की रेडियो, दूरदर्शन जनमंच एवं शासकीय स्तर की
प्रस्तुतियां एवं उपलब्धियां :–

रेडियो ग्रामोफोन रिकार्ड्स		एम.एम.व्ही, पॉलीडोर ऑफ इंडिया, म्यूजिक इंडिया लिमि., सरगम स्टार हिन्दुस्तान (कुल 14 रिकाड्‌र्स)
कैसेट्स		बुन्देली बमबुलियां, लरका बिगारे, उतार दिया गगरी, कर्फ्यू माता, भोपाल, सम्पूर्ण साक्षरता असीम सपने, भक्त कर्मा देवी (कुल 8 कैसेट्स)
सी.डी.	:	आल्हा–ऊदल गायकी की 3 सी.ड़ी, लक्ष्मीबाई रायसो की सी.डी.
वीडियो कैसेट	:	05 कैसेट्स

रेडियो से बुन्देली लोकगीत – (लोकगीत अनुबंधानुसार)

छतरपुर, भोपाल, ग्वालियर, जबलपुर, रीवा, लखनऊ, सागर, गुना		175 कार्यक्रम
रेडियो से लोकसंगीत विषयक वार्तायें	:	5 कार्यक्रम (सागर, छतरपुर)
जनमंच पर बुन्देली लोक संगीत के कार्यक्रम	:	3,500 कार्यक्रम
जनमंचों पर बुन्देली कवि सम्मेलन	:	1,000 कार्यक्रम
शा. स्तर पर लोकसंगीत आल्हा आदि काव्य पाठ	:	100 कार्यक्रम (स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, क्षेत्रीय प्रचार–प्रसार केन्द्रीय सूचना प्रसारण, मध्यप्रदेश

thouo`r

नाम : डा. ओमप्रकाश चौबे

पिता का नाम : स्व. श्री अयोध्या प्रसाद चौबे

जन्म तिथि : 01 जुलाई, 1952

पता : डा. ओमप्रकाश चौबे
शांडिल्य सदन के पीछे, श्रीराम कालोनी,
गोपालगंज वार्ड, सागर (म.प्र.) 470002

फोन नम्बर : 07582–235692 मोबाइल नं. : 9893931888

शैक्षणिक योग्यता : एम.ए. (भूगोल), एम.ए. (हिन्दी), बी.एड., आयुर्वेद रत्न, बी.ई.एम.एस., विधि प्रथम, बी. म्यूज (तबला) प्रथम

अन्य योग्यताएं : विभिन्न जिला, संभाग, राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक गतिविधियों में वर्ष 1970 से वर्तमान तक सफल भागीदारी

1) लोक कला अकादमी सांस्कृतिक गतिविधियों की संस्था में तथा विश्वविद्यालय में वर्ष 1970 से 1990 तक आयोजित सभी प्रमुख कार्यक्रमों, प्रतियोगिताओं में भागीदारी की गई।

(डा. विष्णु पाठक के निर्देशन में)

2) लोकरंग अकादमी, गोपालगंज सागर की संस्था में वर्ष 1991 से 1996 तक लोक संगीत निर्देशन, गायन एवं प्रस्तुतियों में संलग्न रहा। (लगभग 25 प्रस्तुतियां)

(सहयोगी डॉ. सुधीर तिवारी)

3) अभिनव सांस्कृतिक मंच संस्था के संचालक के रूप में वर्ष 1977 से वर्तमान तक।

लेखन एवं सम्पादन : वर्ष 1980 से बुन्देली लोक साहित्य, गीत, संगीत, नृत्य, लोकचित्र आदि विषयों पर लेखन एवं संकलन कार्य से लगभग 140 लेख प्रकाशित (संलग्न)

लेखन :

1) बुन्देली लोक गीतों में जीवन (प्रकाशित चौमासा)
2) बुन्देली गीतों में श्रृंगार सुषमा (प्रकाशित)
3) भई ने विरज की मोर (प्रकाशित)
4) बुन्देली गीतों में वर्णित राष्ट्रीयता (प्रकाशित)
5) कबीर छाप के बुन्देली लोकपद (प्रोजेक्ट संस्कृति विभाग का)
6) झगड़े की फागें (प्रकाशित ईसुरी)
7) विरह गीत/बारहमासा (प्रकाशन स्वीकृति प्राप्त ईसुरी)
8) संस्कार गीत (प्रोजेक्ट) प्रकाशित पुस्तक
9) जेवनार (बुन्देली गारी छायानाट में प्रकाशन हेतु)
10) सैरा–पाई (आकाशवाणी द्वारा वार्ता प्रकाशन)
11) बुन्देलखण्ड की फाग परम्परा (आकाशवाणी द्वारा प्रसारित वर्ष 06)
12) बेला नटनी – गढ़पहरा दुर्ग पर (प्रकाशित)
13) बुन्देली लोक नृत्य (प्रकाशित)
14) बुन्देली लोक चित्रावण (प्रकाशित चौमासा)
15) बुन्देली लोक कथाएं, 100 लोक कथाएं (प्रकाशित)

प्रोजेक्ट – लोककला आदिवासी परिषद

16) बुन्देली लोकनृत्य मौनियां

17) बुन्देली लोक गीतों में रामायण कथा (प्रकाशित, तुलसी साधना अंक : 2, 3, 4, 5)

18) लोक कलाओं का भविष्य (प्रकाशित)

19) 'अटका' बुन्देली लोक कथायें (प्रकाशन हेतु स्वीकृति प्राप्त पुस्तक)

20) बुन्देली लोकगीत (प्रकाशन हेत, स्वीकृति प्राप्त पुस्तक डॉ. जुगल नामदेव के साथ)

बुन्देली लोक गाथायें (प्रकाशित) :

1) धर्मा सांवरी
2) बैरायठा
3) सौरंगा सदाव्रज
4) ढ़ोला मारू
5) रैया
6) राजा गिलंद की गाथा
7) सिरसागढ़ की गाथा
8) धार पुवॉर का पवारा
9) जगदेव को गाथा, लीलावटी गाथा
10) धांदू भगत, कारसदेव की गाथा
11) बुन्देली लोक वाद्य (प्रकाशन हेतु)
12) प्राणायाम (प्रकाशित फार्माकोन)
13) रैया लोक गाथा (प्रकाशित चौमासा)
14) नर्मदा के गीत (प्रकाशन हेतु)
15) ''नौरता'' (प्रकाशन हेतु)
16) बुन्देली फाग परम्परा (प्रकाशित पुस्तक)
17) 'झगड़े की फागें' चौमास के अंक 49 से 54 तक लगातार प्रकाशित
18) बस्तर के लोक नृत्यों पर शोध एवं सर्वेक्षण 1978–80
    लोक कला अकादमी, सांस्कृतिक दल के साथ किया गया।
19) फाग चयन समारोह, सागर
    (बुन्देलखण्ड की फाग मंडलियों का चयन शिविर लोक कला 2001 आदिवासी परिषद के तत्वाधान में)
20) फाग चयन (टीकमगढ़ जिले में)
21) वर्ष 2000 से 2002 तक के लिए ''सीनियर फैलोशिप अवार्ड''
    (बुन्देली गीतों पर)
22) राई – मोनोग्राफ प्रकाशन हेतु
23) चम्बल की संस्कृति एवं साहित्य (पुस्तक प्रकाशन हेतु 2003–04)
24) आदिवासियों का देवलोक (सर्वेक्षण : गौंड़, भोई एवं सौर जनजाति)
25) जनजातियों की फाग परम्परा (गौंड़, भोई, सौर एवं सहरिया) प्रकाशन हेतु प्रस्तुत
26) बुन्देलखण्ड के कीर्ति स्तंभ–हरदौल, आल्हा एवं ईसुरी (म.प्र. संदेश को)
27) फाग साहित्य : म.प्र. की जनपदों पर प्रकाशित पुस्तक
28) संस्कार गीत
29) मृत्यु गीत (प्रकाशन स्वीकृति प्राप्त)

30) कृष्ण लीला (अप्रकाशित)

राष्ट्रीय स्तर एवं राज्य स्तरीय प्रस्तुतियां :

1) वर्ष 1971–72 गणतंत्र दिवस पर राष्ट्रीय स्तर के युवक समारोह नई दिल्ली में सांस्कृतिक कार्यक्रम की सफल प्रस्तुति (गायन एवं नृत्य)
2) राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय युवक समारोह, लखनऊ (नृत्य)
3) घूमर 74, जयपुर : राष्ट्रीय स्तर के युवक समारोह (आदिवासी लोक नृत्य एवं गायन में प्रथम पुरस्कार प्राप्त)
4) 30वें फिल्म फेयर समारोह बाम्बे में लोकनृत्य की प्रस्तुति।
5) फिल्म फेयर समारोह मद्रास में बधाई नृत्य की प्रस्तुति, जुलाई 81
6) फिल्म ''शायद'' के एक गीत में सामूहिक नृत्य की भागीदारी, जुलाई, 78
7) बुन्देली लोक नृत्यों पर टेली फिल्म की शूटिंग वर्ष 1977–78 में भागीदारी
8) ''फूल वालों की सैर'' नई दिल्ली में लोकनृत्य में प्रथम पुरस्कार विजेता दल
9) कंचनजंगा उत्सव, सिक्किम में गीत एवं नृत्यों की प्रस्तुति
10) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, नई दिल्ली में सैरा की भागीदारी
11) अंतर्विश्वविद्यालय युवक समारोह, उज्जैन में प्रथम प,रस्कार विजेता दल 1974
12) राष्ट्रीय युवक समारोह, कुरूक्षेत्र में प्रथम पुरस्कार विजेता दल
13) हरदौर चरित्र पर ''लोक संगीतिका'' में सहगायन 1979 (आकाशवाणी प्रसारण)
14) बेला तमाल ''लोक संगीतिका'' में गायन 1980 (आकाशवाणी प्रसारण)

संस्था की प्रस्तुतियां स्वयं के निर्देशन में :

1) ''जगार उत्सव''
2) ''पचमढ़ी उत्सव''
3) ''लोकरंग'' विजेता टीम
4) ''जतरा'' महोत्सव
5) ''ओरछा उत्सव''
6) ''जगार उत्सव''
7) ग्वालियर मेला
8) ''फूल वालों की सैर'' प्रथम स्थान प्राप्त
9) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, नई दिल्ली
10) बिहार महोत्सव, पटना
11) ताज उत्सव, आगरा
12) खजुराहो उत्सव
13) ओरेंज फैस्टिबल, नागपुर
14) बुन्देली प्रसंग 'श्रुति' बुन्देली गायन
15) निमाड़ उत्सव, महेश्वर
16) कुल्लू महोत्सव, 2001
17) भक्ति पर्व, शहडोल
18) फाग चयन (टीकमगढ़ जिले में)

19) श्रुति, रविन्द्र भवन इन्दौर में लोकगाथा ...... रैया की प्रस्तुति
20) वर्ष 2000 में संस्कृति विभाग द्वारा संस्था के छात्र श्री चन्द्रशेखर उपाध्याय को लोकनृत्य, बधाई पर स्कॉलरशिप प्रदान की गई।
21) वर्ष 2015 में अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म फेस्टिबल, खजुराहो में भागीदारी।

विशेष :–

1) वर्ष 2000 से 2002 तक के लिए ''सीनियर फैलोशिप अवार्ड'' बुन्देली गीतों पर
2) बुन्देलखण्ड में प्रचलित पारम्परिक गीतों पर लोक नाद, नई दिल्ली में म.प्र. दिवस पर – सह निर्देशन
3) ए.वी.आर.सी. द्वारा निर्मित तीन फिल्मों में भागीदारी, संगीत निर्देशन प्रस्तुत किया, बधाई, लोक चित्रकला, मिट्टी के बर्तन
4) ''लोकनाद'' निमाण उत्सव महेश्वर में सह निर्देशन
5) मेघोत्सव, कालीदास अकादमी उज्जैन का आयोजन (सैरा नृत्य की प्रस्तुति)
6) लोकरंजन, खजुराहो
7) लोकोत्सव, सागर
8) लोकरंग, भोपाल (सैरा लोकनृत्य में द्वितीय स्थान, विजेता दल)
9) भोपाल दूरदर्शन के निर्माणाधीन टी.वी. सीरियल ''गुलफाम'' में भागीदारी
10) ''बादल राग'' भारत भवन भोपाल में सैरा नृत्य की प्रस्तुति
11) श्रुति : बुन्देली गायन पर आधारित कार्यक्रम में निर्देशन
12) राई : बुन्देली गायन पर आधारित कार्यक्रम में निर्देशन
13) तीज उत्सव हिसार, हरियाणा में सैरा की प्रस्तुति
14) कला यात्रा : ई.टी.व्ही. के सीरियल में प्रमुख भागीदारी
15) बुन्देली गीतों में जल का महत्व (प्रकाशित चौमासा)
16) बुन्दली बन्ना गीत ''लूर'', राजस्थान (प्रकाशन हेतु)
17) वसदेवा गायन : मुम्बई कथा गायन की प्रस्तुति, दिसम्बर 2006
18) विरासत, आकाशवाणी दिल्ली में प्रसारित वार्ता में स्क्रिप्ट लेखन
19) धरोहर : ऐरण स्थल पर आकाशवाणी सागर में कार्यक्रम की प्रस्तुति
20) ओरछा का सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व (चौमासा)
21) कृष्णलीला गीत : तुलसी साधना अंक–7 से लगातार प्रकाशित
22) ।ज अंतर्राष्ट्रीय सांगीतिक कार्यक्रम नई दिल्ली, 2013
23) बुन्देली शब्दकोष प्रकाशन हेतु प्रस्तुत (30,000 शब्दों का)
24) आकाशवाणी से प्रसारित वातायें (लगभग 25 वार्तायें)
(सागर, छतरपुर, ग्वालियर एवं दिल्ली केन्द्रों द्वारा)

सेमीनार :

1) सागर की विरासत, मानव शास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
2) वृह्द देशी संगीत महोत्सव, संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली
3) स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड की भूमिका, प्राचीन भारतीय इतिहास, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर

सम्मान :

1) मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, शाखा सागर द्वारा वर्ष 2010 को श्री जगदीश तिवारी ''बदनाम'' सम्मान
2) मध्यप्रदेश लेखक संघ भोपाल द्वारा कस्तूरी देवी चतुर्वेदो स्मृति लोकभाषा सम्मान 2013

(डा. ओ.पी. चौबे)

BIO-DATA

Name	:	**RAJENDRA PRASAD CHOUBEY**
Father's Name	:	Late Shri Sitaram Choueby
Date of Birth	:	01 January 1952
Educational Qualification	:	B.Com.
Present Address	:	Police Line, Sagar (M.P.)
E-mail ID	:	rajendraprasadchoubey44@gmail.com
Qualification in Field	:	Traditional Artist since last 35 years. Ramayan, Nautanki, Natak, Folk Music, Folk Singing etc.

As Performer :

1. **Lok Rang Academy :** Ten years experience Presentation in District level, State level, National level and International level various folk festivals at Bhopal (as Dholak player), Jagar Festival Raipur (Musician in Bundeli Badhai Dance), Phool Balon Ki Ser, Delhi as musician-first prise winner team in National level, Pachmari Festival Pachmari, Internationla Deshara festival Kullu-Manali as Saira Dancer, Gwalior Mela as dancer, Lokrang Republic day festival Bhopal winner team, International Trade Fair Delhi as dancer musician and singer, Kanchanganja Festival Sikkim as musician,, International Dance Festival Lokranjan Khajuraho Saira Dancer, Orchha festival Orchha as Bundeli folk singer, Dancer and folk Musician.
2. Abhinav Sanskritic Manch-10 year stage performance experience presenting Saira Dance, Rai Dance, Badhai Dance, Mouniya dance, Bundeli traditional gayan and Musician etc.
3. Folk Musician Dholak, Mridang, Nagariya, Dhapla, Kartal, Nagara, Ramtula, Rainkari, Khangri etc.
4. **Self Presentation with my Direction :** Last five years in my direction performed Bundeli Dance, Bundeli gayan and gayan also.
5. Doordarshan presentation Bhopal Doordarshan, Delhi Doordarshan, E.Tv. Shahara and local channels. Presentation in Alha Gayan at Mumbay Doordarsan.
6. Sodh and Survey : Ramlila, Natak and Noutanki, Harishchand Taramati (Rohit), Mouradh natak (Tamrudh), Ramlila ((Lakxhman), Amarsingh Rathore (Ramsingh), Pati Bhakti (Seth Madanchand), Hardoul (Hardoul), Garb ki duniya (Main roll).
7. **Bundeli Lok Gayan :**
   (1) Sanskari Geet
   (2) Dharmik Geet Bhajans
   (3) Lok Gatha

   Gayaen : Raiya, Hardol, Alha, Dhola, Bairaitha, Jagdeo etc.
8. **Recording Audio Cassette :** Gatha Gayan, Bundeli Khayal, Swang, Religious Songs etc. Radio Vartas-Basdeva, Lok Sangeet, Lok Katha etc.
9. Spl-Asstt. Director in LOKNAD at Delhi on M.P. Day and Maheshwer
10. AVER films Alha, Badhai, Bundeli Gayan etc.
11. International SAT Festival Delhi Music Direction, Presentation, Seminal Presentation.

(Rajendra Prasad Choubey)